August 2022

अरफ़ात किरण

हक़ीक़ी आज़ादी की तलाश

"यक़ीनन आज़ादी बड़ी नेमत और ज़िन्दगी की अहम तरीन ज़रूरत है और इसके लिए जो क़ुर्बानियां की जाएं वह बजा हैं। हमको उन रहनुमाओं का भी शुक्रगुज़ार होना चाहिए जिन्होंने आज़ादी की जंग लड़ी और मुल्क को आज़ाद कराया, लेकिन मैं निहायत सफ़ाई से कहूंगा कि हमारी यही ताक़त और फ़ैसले की क़ूव्वत जिसकी बदौलत हमारे मुल्क से ग़ुलामी की लानत ख़त्म हुई। अगर इससे ज़्यादा हक़ीक़ी और मुकम्मल आज़ादी के हुसूल और इन्सानियत की तामीर और तरक़्क़ी और इन्सानों को इन्सान बनाने के काम पर ख़र्च की जाती तो यह दुनिया का सबसे अहम काम और मुश्किलात व मसाएल का अस्ली और मुस्तक़िल हल होता, मैं आज़ादी की तहरीक की तहक़ीर और नाशुक्री नहीं करता, मगर यह कहे बग़ैर नहीं रह सकता कि दुनिया का सबसे अज़ीमुश्शान काम और इन्सानियत की सबसे बड़ी ख़िदमत यह है कि इन्सान हक़ीक़ी इन्सान बन जाए।"

———• मुफ़क्किर-ए-इस्लाम हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली नदवी (रह०)

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

मुझे यह डर है दिल ज़िन्दा तो न मर जाए

"ऐ अज़ीज़ान मन! दरूद व अलम की पाक दावतें सिर्फ़ इस रवानी–ए–आब–ए–तसलसुल सदा और हंगामा ग़ोग़ा के लिए नहीं होतीं जो आंसूओं, फ़ुग़ानों और मातमों के नाम से ज़हूर में आ जाएं और अगर उनका यही मक़सद होता तो उसके लिए इन्सान की कोई ख़ुसूसियत न थी, कितने ही समन्दर पानी से भरे हुए हैं और कितने ही जंगल शोर व ग़ोग़ा से हंगामा ज़ार हैं, बल्कि यह दावत, यह पुकार, यह तलब, यह "हल मिन मजीब" फ़िल हक़ीक़त उन आंसुओं के लिए है जो सिर्फ़ आंखों ही से नहीं बल्कि ऐमाक़े क़ल्ब से उठीं, वह सिर्फ़ हाथ ही मातम के लिए नहीं पुकारतीं, बल्कि दिल के मातम की महज़ एक सदाए हक़ीक़त के लिए तिश्ना है, अगर तुम्हारे पास उसके लिए आंखों का आंसू न हो तो उसे कोई शिकायत नहीं, लेकिन आह तुम्हारी ग़फ़लत, अगर तुम्हारे पहलुओं में कोई ज़ख़्म न हो जिससे पानी की जगह ख़ून बहे, अगर तुम्हारी ज़बानों को दर्द की चीख़ नहीं आती तो कोई मुज़ाएक़ा नहीं, लेकिन आह यह क्या है कि तुम्हारे दिलों के अन्दर हक़ीक़त शनासी की एक टीस, इबरत की एक टपक, बसीरत की एक ट्रिप, एहसासे सही व हक़ का एक इज़्तिराब भी नहीं।

तूफ़ाने नूह लाने से ऐ चश्म–ए–फ़ाएदा?
दो अश्क भी बहुत हैं अगर कुछ असर करें।।

अल्लाह अल्लाह सैय्यदुश्शुहदा मज़लूम की मज़लूमी और या लिलअजब ग़फ़लत व नादानी की बूक़लमूनी! ठससे बढ़कर दुनिया में "मज़लूमी" की मिसाल और क्या हो सकती है कि दुश्मनों और दोस्तों दोनों ने उस पर ज़ुल्म किया, दुश्मनों ने उसकी शहादते अज़ीमा की अज़मत मिटानी चाही मगर दोस्तों ने भी उसकी शहादत की अस्ली तक़दीस व शर्फ़ के लिए सच्चाई और अमल का एक आंसू भी न बहाया, दुश्मन तो दुश्मन थे, इसलिए उन्होंने इस दावते हक़ को मिटाना चाहा, मगर दोस्त दोस्त होकर भी उसकी दावत की पैरवी न कर सके।

पस सच्चा मातम वही है जो सिर्फ़ हाथ ही का नहीं बल्कि दिल का मातम हो और दावते दर्द का अस्ली जवाब वही है जो इबरत व बसीरत की ज़बान से निकले। तुम्हारी आंखें इस हादसे पर बहुत रो चुकी हैं। मगर अब तुम्हारे दिल का रोना बाक़ी है और अगर रोता है तो अपने दिल को रुलाए, वरना सिर्फ़ आंखों की इस रवानी को लेकर क्या कीजिए, जिसमें दिल की अश्क़ फ़िशानी का कोई हिस्सा नहीं है, हालांकि इन्सान की सारी कायनाते हयात सिर्फ़ दिल ही की ज़िन्दगी से है।

मुझे यह डर है कि दिल ज़िन्दा तो न मर जाए। कि ज़िन्दगी इबारत है तेरे जीने से।।

ज़रूरत इसकी है कि हादसा–ए–अज़ीमा पर ग़ौर व फ़िक्र की एक नई सफ़े मातम बिछाएं और उन हक़ीक़तों और बसीरतों की जुस्तुजू में निकलें जिन पर आंखों की अश्क फ़शानियों से ज़्यादा दिल के ज़ख़्मों से ख़ून बहता है और हाथों से ज़्यादा रूह पर मातम तारी होता है।"

﴿وَذَكِّرْ فَإِنَّ الذِّكْرَىٰ تَنفَعُ الْمُؤْمِنِينَ﴾

(और याद दिलाते रहिए इसलिए कि निश्चित रूप से याद दिलाना मानने वालों को फ़ायदा पहुँचाता है)

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद (रह०)

(शहीद–ए–कर्बलाः 6–8)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक: 8 अगस्त 2022 ई0 वर्ष: 14

संरक्षक: हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी (अध्यक्ष – दारे अरफ़ात)

सम्पादक

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

अब्दुस्सुबहान नाखुदा नदवी

महमूद हसन हसनी नदवी

सह सम्पादक

मो0 नफ़ीस ख़ाँ नदवी

अनुवादक

मोहम्मद सैफ़

मुद्रक

मो0 हसन नदवी

उम्मत-ए-मुस्लिमा की आबरू

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

मैं अपने सहाबा की आबरू हूं, तो जब मैं रुख़्सत हो जाऊंगा तो मेरे सहाबा पर वह वक़्त आएगा जिसका वादा है (फ़ित्ना-फ़साद) ठीक उसी तरह मेरे सहाबा मेरी उम्मत की आबरू हैं, लिहाज़ा जब वह न रहेंगे तो मेरी उम्मत पर भी वह घड़ी आ जाएगी जिसका वादा है

सही मुस्लिम: 2531

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली, यू0पी0.229001

प्रति अंक 15रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला खाँ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण, मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू0

Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi Samiti (Punjab National Bank) A/c No. 6127002100000339 (IFSC: PUNB0612700)

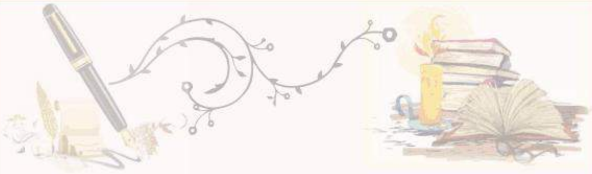

यह क़दम-क़दम बलाएं ...

आमिर उस्मानी (रह0)

न सकत है ज़ब्त-ए-ग़म की, न मजाले अश्के बारी।
यह अजीब कैफ़ियत है न सुकूं है न बेक़रारी।।

तेरा एक ही सितम है तेरे हर करम पे भारी।
ग़मे दो जहां से दे दी मुझे तूने रस्तगारी।।

मेरी ज़िन्दगी का हासिल तेरे ग़म की पासदारी।
तेरे ग़म की आबरू है, मुझे हर ख़ुशी से प्यारी।।

यह क़दम-क़दम बलाएं यह स्वाद कूए जानां।
वह यहीं से लौट जाएं जिसे ज़िन्दगी हो प्यारी।।

तेरे जांनवाज़ वादे मुझे क्या फ़रेब देते।
तेरे काम आ गयी है मज़ी ज़ूद एतबारी।।

मेरी रात मुन्तज़िर है किसी और सुबह-ए-नव की।
यह सहर तुझे मुबारक जो है ज़ुलमतों की मारी।।

वही फूल, चाक दामन, वही रंगे अहले गुलशन।
अभी सिर्फ़ यह हुआ है कि बदल गए शिकारी।।

मेरी आफ़ियत के दुश्मन मुझे चैन आ चला है।
कोई और ज़ख़्म ताज़ा कोई और ज़रबे कारी।।

मुझे ले चला बहाकर ग़मे ज़िन्दगी का धारा।
ग़मे इश्क़ यावरी कर, है मक़ामे शर्मसारी।।

जो ग़नी हो मासवा से वह गदा गदा नहीं है।
जो असीरे मासवा हो वह अमीर भी भिखारी।।

इस अंक में:

दुनिया में बाक़ी रहने का क़ानून.....................................3

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

अहल-ए-बैत की सीरत व किरदार तारीख़ के आइने में.......4

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी

हज़रत मूसा व ख़िज़र (अलै0) के सफ़र में वाक़्यात की हिकमत...6

हज़रत मौलाना सैय्यद राबे हसनी नदवी

यौम-ए-आज़ादी का पैग़ाम..8

मौलाना ख़ालिद सैफ़ुल्लाह रहमानी

सच्चाई क्या है?..9

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

निकाह के चन्द मसाएल (3).......................................11

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

ख़ालिक़-ए-हक़ीक़ी का निज़ाम-ए-अर्ज़ी व फ़ल्की............14

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

हज़रत मौ0 अली मियाँ नदवी (रह0)-बहैसियत-ए-उर्दू अदीब...17

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

इस्लाम और इन्सानियत की मसीहाई............................19

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

सम्पादकीय

दुनिया में बाक़ी रहने का क़ानून

● बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

दुनिया बड़ी बेलाग है, वह न क़ौम देखती है न मज़हब, किसी ख़ानदान या क़बीले से उसका कोई रिश्ता नहीं, मन्सब व वजाहत से भी उसका कोई लेना–देना नहीं, वह दो–दो चार की तरह फ़ैसले करती है, वह यह भी नहीं देखती कि कौन फ़ायदा पहुंचाने की सलाहियत रखता है, वह सिर्फ़ यह देखती है कि कौन कितना फ़ायदा पहुंचाता है। उसके फ़ैसले इसी फ़ायदा पहुंचाने की बुनियाद पर होते हैं। जो जितना ज़्यादा फ़ायदा पहुंचाए, किसी भी हैसियत से वह जितना ज़्यादा फ़ायदेमन्द हो उसकी क़द्र दां है। बक़ा–ए–अन्फ़ा का यही वह दस्तूर है जो दुनिया में चला आ रहा है, इस सिलसिले में उसके यहां कोई लोच–लचक नहीं है। जो जितना ज़्यादा फ़ायदा पहुंचाएगा वह बाक़ी रहेगा। उसकी हिफ़ाज़त की जाएगी। दुनिया की कोई ताक़त उसको फ़ना के घाट नहीं उतार सकती और जब तक उसकी यह नाफ़ेईयत बाक़ी है वह ख़ुद भी बाक़ी है और यह ख़ासियत जितनी कम होती जाएगी और उसकी बुनियादें जितनी कमज़ोर होती जाएंगी, उसका वजूद ख़तरे में पड़ता चला जाएगा।

दुनिया की हर चीज़ के बारे में यही फ़ैसला है, चाहे वह अशरफ़ुल मख़लूक़ात हो या कोई भी मख़लूक़ हो। एक कुम्हार बर्तन बनाता है, जो मिट्टी बर्तन बनाने के लाएक़ नहीं होती उसको फेंक दिया जाता है, इसलिए कि उसमें फ़ायदा पहुंचाने की सलाहियत ख़त्म हो गयी, अब वह कुम्हार के काम की नहीं रही।

यही अल्लाह का फ़ैसला है, इरशाद–ए–ख़ुदावन्दी हैः "बस झाग तो बेकार जाता है और जो चीज़ लोगों के लिए मुफ़ीद होती है वह ज़मीन में बाक़ी रहती है।" (सूरह रअदः 17)

सूदमन्दी जिस तरह की भी हो, किसी हैसियत से भी कोई चीज़ फ़ायदा पहुंचा सकती हो, आख़िरत के फ़ायदे उससे हासिल हों या दुनिया के, उसकी बक़ा के फ़ैसले होते हैं, आख़िरत के फ़ायदे यक़ीनन सबसे बढ़कर होते हैं, लेकिन दुनिया के बारे में अल्लाह का फ़ैसला यही है।

दुनिया की तारीख़ यही बताती है कि जिन क़ौमों ने नाफ़ेईयत साबित की, हज़ारों ख़राबियों के बावजूद भी दुनिया में उनका तसल्लुत क़ायम रहा, मुसलमानों ने दुनिया को जब तक फ़ायदा पहुंचाया, दीन का भी दुनिया का भी, तक़रीबन एक हज़ार साल की तारीख़ उनकी यही रही है कि कोई उनको हिला न सका, फिर यूरोप ने जब ईजादात के मैदान में क़दम रखा और दुनिया नए–नए इन्किशाफ़ात व ईजादात से पट गयी तो आज हज़ार ख़राबियों के बावजूद मैदाने अमल में हैं।

मुसलमानों के पास बहुत कुछ था और एक तवील दौर उनका ऐसा गुज़रा है कि उन्होंने दुनिया को बहुत कुछ दिया और सबसे बढ़कर ईमान व अख़्लाक़ की जो दौलत तक़सीम की उससे दुनिया में बहार आ गयी। अफ़सोस की बात यह है कि आज मुसलमान तहीदस्त हो गये। न वह ख़ुद दौलते ख़ुदादाद से फ़ायदा उठाते हैं और न दुनिया में उस दौलत को तक़सीम करने के लिए तैयार हैं। इसका नतीजा खुला हुआ सामने है कि न अपने मुल्कों में उनको सुकून है न दुनिया के किसी और मुल्क में।

मुसलमानों की पस्ती का राज़ यही है कि उन्होंने ईमान व अख़्लाक़ की दौलत गंवा दी, जो उनका सबसे बड़ा सरमाया था और उस दौलत को तक़सीम करके उन्होंने दुनिया को जन्नत निशां बना दिया था। आज वह ख़ुद उसके तही दस्त होते जा रहे हैं। ज़रूरत इसी की है कि वह माज़ी से अपना रिश्ता मुस्तहकम करें और दुनिया को अख़्लाक़ व किरदार के जौहर आरास्ता करें और जहां भी वह अक़्लियत में हैं वहां साबित करें कि वह इन्सानों की ज़रूरत हैं, इस मुल्क की ज़रूरत हैं, अपने अन्दर वह जितनी नाफ़ेईयत पैदा करेंगे, ज़रूरतमंदो के काम आएंगे, मुहब्बत व इन्सानियत का पैग़ाम आम करेंगे, ईमान व अख़्लाक़ की ताक़त से मुस्लह होकर मैदान में आएंगे, अल्लाह तआला का फ़ैसला है कि वह अपना एक मुक़ाम पैदा कर लेंगे, फिर उनको कोई अपनी जगह से हिला नहीं सकता, हर शख़्स उनकी ज़रूरत महसूस करेगा, ऐसी ज़रूरत जिससे किसी को मुफ़िर न हो।

अहल-ए-बैत की सीरत व किरदार तारीख़ के आइने में

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

ख़ानदान–ए–नुबूव्वत के अफ़राद, अहले बैत किराम, सैय्यदना अली–ए–मुर्तज़ा (रज़ि0) और उनकी औलाद अपनी इस निस्बत–ए–गिरामी के बारे में जो इनको सरवर–ए–कायनात मुफ़क्किर–ए–मौजूदात रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की ज़ात से हासिल थी। बड़े ग़य्यूर व खुद्दार वाक़ेअ हुए थे। वह दूसरे मज़ाहिब और क़ौमों के दीनी पेशवाओं के ख़ानदानों और फ़ज़न्दों की तरह जिनको उन मज़ाहिब के पैरो हर हाल में अज़मत व तक़दीस की निगाह से देखते हैं और उनके साथ मा फ़ौकुल बशर हस्तियों का सा मामला करते हैं, अपनी इस निस्बत व नस्ब से कोई दुनियावी फ़ायदा नहीं उठाते थे और इस्तेख़्वां फ़रोशी और मुफ़्तख़ोरी से कोसों दूर रहते थे। तज़किरा की किताबों में उनकी खुद्दारी, इज़्ज़त–ए–नफ़्स, इस्तिग़ना व बेनियाज़ी के जो वाक्यात आए हैं उनसे उनकी सीरत व किरदार का जो नक़्शा सामने आता है वह दूसरे अदयान व मलल के इस दीनी तबक़ो (ब्राहम्णों व पुरोहितों) से बहुत अलग है। जिनको पैदाइशी तक़द्दुस और अज़मत हासिल होती है और जिनको अपनी ज़रूरियाते ज़िन्दगी की तकमील के लिए किसी मेहनत व कोशिश की ज़रूरत नहीं होती।

सैय्यदना हसन बिन अली किसी ज़रूरत से बाज़ार गए। उन्होंने एक दुकान से कुछ माल ख़रीदना चाहा, दुकानदार ने उसके अस्ल दाम बताए फिर किसी के इशारा करने या किसी क़रीने से उसको इल्म हो गया कि यह नवासा–ए–रसूल (स0अ0व0) हसन बिन अली हैं। उसने फ़ौरन दाम कम कर दिए और ख़ास रिआयत करनी चाही। हज़रत हसन माल छोड़कर वापस आ गए और फ़रमाया कि मैं अपनी निस्बत से यह फ़ायदा नहीं उठाना चाहता कि मेरे साथ रिआयत की जाए।

सैय्यदना अली बिन हुसैन (ज़ैनुल आबदीन) के रफ़ीक़ व ख़ादिमे ख़ास जवेरिया बिन अलसमा कहते हैं कि आपने रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की क़ुरबत की बुनियाद पर कभी एक दिरहम का भी फ़ायदा नहीं उठाया। यही सैय्यदना अली बिन ज़ैनुलआबदीन जब सफ़र करते थे तो अपने नाम व नस्ब का इज़हार नहीं होने देते थे। लोगों ने इसकी वजह पूछी तो फ़रमाया मुझे यह बात नापंसद है कि मैं इस निस्बत से फ़ायदा उठाऊं और दूसरों को फ़ायदा न पहुंचाऊं।

हज़रात अहले बैत और शेरे ख़ुदा हज़रत अली (रज़ि0) के अबनाव व अहफ़ाद जो हर शुजाअत व शहामत से आरास्ता थे, जो ख़ानदाने नुबूव्वत का शेआर और सैय्यदना अली मुर्तज़ा और हज़रत हुसैन (रज़ि0) शहीदे कर्बला की मीरास थी। इनका अमल अज़ीमत, जुराअत के साथ ऐलाने हक़, इफ़ादते दीन और मुसलमानों की सही रहनुमाई के सिलसिले में हर तरह के ख़तरात बर्दाश्त करने और अपने और अहले ताल्लुक़ के मसाएब में मुब्तिला होने की परवाह न करने पर था। सैय्यदना अली ज़ैनुलआबदीन के साहबज़ादे ज़ैद बिन अली ने 122 हिजरी में ख़लीफ़ा–ए–उमवी हश्शाम बिन अब्दुल मलिक बिन मरवान की हुकूमत में (जो अपने वक़्त की अज़ीम तरीन और मुस्तहकम तरीन हुकूमत थी) खुरूज किया और हुकूमत की बड़ी–बड़ी फ़ौजों पर फ़तेह पायी। आख़िर में शहादत से सुरखुरू हुए। उनको सूली दी गयी और चार साल तक मसलूब रहे।

रजब 145 हिजरी में हज़रत हसन (रज़ि0) के परपोते मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह अलमहज़ बिन हसन मुसन्ना बिन हसन बिन अली बिन अबी तालिब मारूफ़ बजू अन्नफ़्स उनके भाई इब्राहीम बिन अब्दुल्लाह ने ज़िलहिज्जा 145 हिजरी में बसरा में मन्सूर के ख़िलाफ़ अलमे जिहाद बुलन्द किया। इस्लाम के दो अज़ीम तरीन फ़िक़्ही मकातिबे मज़हब मालिकी व हनफ़ी के दोनों जलीलुलक़द्र इमामों इमाम मालिक व इमाम अबू हनीफ़ा ने उनकी बैत व हिमायत का फ़तवा दिया। इमाम अबू हनीफ़ा ने माली नज़राना भी पेश करके अपनी हिमायत व नुसरत का इज़हार फ़रमाया जो बाद में मन्सूर के इताब व सरेजन्स का सबब बना। मुहम्मद जुन्नफ़्स अलज़किया ने 15 रमज़ान 145 हिजरी को ''ऐजाजुज्ज़ैत'' के मक़ाम पर जो मदीना मुनव्वरा में

वाक़ेए है, मर्दाना व सरफ़रोशाना तरीक़े पर शहादत पायी और उनके भाई इब्राहीम बिन अब्दुल्लाह ने 24 ज़िलहिज्जाह 145 हिजरी में कूफ़ा में ख़िलअत–ए–शहादत ज़ेबेतन किया।

इसके बरअक्स ऐसी कसीरुत्तादाद तारीख़ी रिवायात हैं जिनसे अहले बैत की बुलन्द हिम्मती, अज़ीमत पर अमल, मुसलमानों की शीराज़ाबन्दी और इज्तिमाइयत की फ़िक्र की रोशन शहादतें मिलती हैं। बाबकी जो हज़रत ज़ैद बिन अली बिन हुसैन के ख़ुद्दाम व रुफ़क़ा में से थे, बयान करते हैं कि एक मर्तबा मैं हज़रत ज़ैद के साथ मक्का की तरफ़ रवाना हुआ, जब निस्फ़ शब हुई और सुरैय्या (सुरैय्या सितारा) आसमान पर साफ़ नज़र आने लगा तो उन्होंने मुझसे कहा कि बाबक़ी तुम सुरैय्या को देखते हो, तुम्हारे ख़्याल में कोई वहां तक पहुंच सकता है, मैंने कहा नहीं, उन्होंने फ़रमायाः ख़ुदा की क़सम मेरी तमन्ना है कि मेरा हाथ उस पर हो और मैं उस बुलन्दी से ज़मीन पर गिरूं, जहां भी मौक़ा हो और मेरे जिस्म के टुकड़े–टुकड़े हो जाएं, मगर अल्लाह तआला रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की उम्मत में सुलह व इत्तिहाद करा दे।

बाज़ मुसन्निफ़ीन और मुहिब्बीन–ए–अहले बैत बुर्ज़ुगाने अहले बैत का नक़्शा इस तरह खींचते हैं जैसे उनकी ज़िन्दगी का सबसे बड़ा मक़सद और दिलचस्पी ग़ासिबीन के हाथ से ख़िलाफ़त का निकाल लेना ही था। यही उनका मक़सद–ए–हयात और मशग़ला–ए–ज़िन्दगी था और यही उनके ऐसाब और क़वी फ़िक्रिये पर मस्तूली रहता था। उनको उम्मते मुहम्मदी, इस्लामी मुआशरे से कोई दिलचस्पी उसकी तरबियत व इस्लाह की कोई फ़िक्र, ज़हद व इबादत और तब्लीग़ व दावत से कोई सरोकार न था, लेकिन वह तारीख़ जो रंग आमेज़ी से पाक रही है वह उनकी ऐसी तस्वीर पेश करती है जो उनके नस्ब व निस्बत और उनके मक़ामे आली के हर तरह शायाने शान और क़ाबिले क़यास है। यहां पर सिर्फ़ हज़रत जाफ़र सादिक़ की सीरत व किरदार, उनके अख़लाक़ व शमाएल, उनकी पाकीज़ा नफ़्सी, दुनियावी अग़राज़ व मक़ासिद से बेनियाज़ी, आला दर्जे के तक़वा और एहतियात और दुनिया से बेरग़बती और आख़िरत तल्बी का अंदाज़ा होता है।

इमाम मालिक उनका हाल बयान करते हुए फ़रमाते हैं, मैं हज़रत जाफ़र बिन मुहम्मद की ख़िदमत में हाज़िर होता, वह अक्सर मुतवस्सिम रहते, लेकिन जिस वक़्त रसूलुल्लाह (स0अ0व0) का नामे नामी उनकी मजलिस में लिया जाता, तो चेहरे का रंग ज़र्द व सब्ज़ हो जाता। मैं अर्से तक उनकी ख़िदमत में हाज़िर होता रहा। जब कभी देखता उन्हें बातों से ख़ाली न पाता, या नमाज़ में मशग़ूल हैं, या रोज़े से हैं, या क़ुरआन शरीफ़ की तिलावत फ़रमा रहे हैं, मैंने कभी नहीं देखा कि बग़ैर तहारत के उन्होंने कोई हदीस बयान की हो। वह कभी ग़ैर मुताल्लिक़, ग़ैर ज़रूरी बात न फ़रमाते। वह इन आबिदों, ज़ाहिदों में थे, जिन पर ख़शीयते इलाही का ग़ल्बा होता है।

इमाम जाफ़र के अक़वाल व इरशादात में से है, फ़रमाते थे कि दीन के बारे में कभी बहस व जिदाल से काम न लो इसलिए कि इससे शक पैदा होता है और निफ़ाक़ की आबयारी होती है। यही हाल इनके अस्लाफ़े किराम का था जिनको अहले सुन्नत अपने–अपने अहद के किबारे औलिया अल्लाह, उलमाए रब्बानी, मुस्लह व दाई–ए–दीन और उम्मत के लिए फ़िक्रमन्द व साई समझते हैं और हज़राते अइम्मा इनको इस्ना अस्रिया के नाम से याद करते हैं। इन सादात किराम ने जिनकी रगों में हाशमी ख़ून था, जब पूरे तौर पर इसका अंदाज़ा कर लिया कि अब ख़ुल्फ़ाए बनू अब्बास के ख़िलाफ़ अलमे जिहाद बुलन्द करना जिनकी हुकूमत एशिया व अफ़्रीक़ा के वसीअ और मुतमद्दिन मोमालिक पर हावी थी और जिनके ज़ेरे साया इस्लाम दूर–दराज़ के मुल्कों तक पहुंच रहा था और मरकज़े ख़िलाफ़त में भी अमन व अमान क़ायम था। इल्मे दीन की इशाअत हो रही थी और इस्लाम की तालीमात और निज़ाम का बहुत सा हिस्सा क़ायम था। उन्होंने किसी ऐसी ख़ूंरेज़ी व इन्तिशार अंगेज़ी से एहतिराज़ किया जिससे बज़ाहिर (उनके ख़ानदान के पेशरो असहाब जिलादत व फ़ुतूवत की कोशिशों की तरह) किसी बड़े नतीजे के निकलने की उम्मीद नहीं थी। उनकी यह ख़ामोशी और मुसलमानों की दीनी निगरानी, बातनी व अख़लाक़ी रहनुमाई के काम में मशग़ूलियत व सरगर्मी न किसी सहूलत पसंदी और आफ़ियत कोशी पर मुबनी थी, न इस उसूले तक़ैय्या पर अमल करने पर जिस पर अमल व तलक़ीन की निस्बत उनकी बुलन्द शख़्सियतों की तरफ़ की गयी है।

हज़रत मूसा व ख़िज़र (अलैहिस्सलाम)
के सफ़र में वाक़्यात की हिकमत

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

हज़रत मूसा (अलैहिस्सलाम) ने हज़रत ख़िज़र (अलैहिस्सलाम) के साथ सफ़र किया और तीन ख़ारिक़े आदत वाक़्यात देखे, जिन पर उनसे ज़ब्त न हुआ, इसीलिए हज़रत ख़िज़र ने फ़रमाया कि अब हम दोनों आगे एक साथ नहीं जाएंगे, यहीं से जुदा हो जाएंगे, ताहम जुदा होने से पहले हम उन तीनों वाक़्यात की हिकमत बयान किये देते हैं।

हज़रत ख़िज़र (अलैहिस्सलाम) ने सबसे पहले कश्ती के बारे में बताया कि ग़रीब लोगों की कश्ती थी, जिनका वही ज़रिया–ए–मआश था और उसी से उनकी रोज़ी–रोटी और सुबह व शाम का खाना चलता था। इस कश्ती का मल्लाह समन्दर में मुसाफ़िरों को एक किनारे से दूसरे किनारे तक पहुंचाता था और उनसे उस काम का किराया लेता था। तो मैंने उस कश्ती को ऐबदार कर दिया और उसमें ख़राबी पैदा कर दी, इसकी वजह यह थी कि वहां क़रीब ही में एक बादशाह था जो नई कश्तियों पर अपने इस्तेमाल में लाने के लिए क़ब्ज़ा कर लेता था। शायद वह इलाक़ा ऐसा होगा जहां पानी वग़ैरह की कसरत होगी और उसमें कश्ती की ज़रूरत ज़्यादा पड़ती होगी तो बादशाह बजाए उसके कि ख़ुद अपनी कश्तियां बनवाए, ग़रीब लोगों की नई कश्तियां छीन लेता था, चूंकि यह कश्ती भी नई थी लेकिन यह ग़रीब और दीनदार लोगों की कश्ती थी, इसलिए अल्लाह तआला ने चाहा कि इनकी कश्ती बादशाद के दस्ते ग़सब से महफ़ूज़ रहे इसीलिए हमने कश्ती ऐसी कर दी कि अगर बादशाह के हरकारे लेने के लिए आएंगे तो इसमें ऐब देखकर अपने साथ नहीं ले जाएंगे।

अगर कोई शख़्स हलाल कमाई का एहतिमाम करे तो उसके रिज़्क़ में बरकत होती है और अल्लाह ग़ैब से उसकी हिफ़ाज़त के असबाब पैदा करता है। मज़कूरा वाक़्या इसकी वाज़ेह मिसाल है। अल्लाह ने बेचारे ग़रीब लोग जो मेहनत की कमाई करते थे उनकी कश्ती को ज़ालिम बादशाह से महफ़ूज़ रखा, गोया इनपर रहम किया और इनकी कश्ती को बचा लिया। ज़ाहिर है अल्लाह ने इन्हीं की कश्ती को बचाया जिन्होंने मेहनत और हलाल कमाई से गुज़ारे पर क़नाअत की न कि हर शख़्स की कश्ती को बचा लिया। अगर उनकी कश्ती छिन जाती तो उनका ज़रिया–ए–मआश बाक़ी न रहता और वह मेहनत का जज़्बा होने के बावजूद कमाने से मजबूर होते। लेकिन अल्लाह राज़िक़े हक़ीक़ी है, उसने रिज़्क़ देने की ज़िम्मेदारी अपने पास रखी है, वही रिज़्क़ देता है इसलिए उसने अपने ख़ास बन्दों के साथ फ़ज़ल का मामला किया और मुसीबत से बचा लिया। लेकिन बाज़ मर्तबा बन्दा अल्लाह के इस फ़ज़्ल को नहीं समझता और इस ज़ोम में पड़ जाता है कि यह रोज़ी–रोटी हमारी अपनी मेहनत का नतीजा है।

सूरह कहफ़ के नुज़ूल का मक़सद यही है कि बन्दे को पता चल सके कि जो कुछ होता है अल्लाह के करने से होता है न कि बन्दों के करने से। अलबत्ता ज़ाहिर में यही लगता है कि बन्दे कर रहे हैं। इसकी वजह यह है कि अल्लाह तआला ने दुनियावी निज़ाम ज़राय पर मुन्हसिर रखा है और ज़ाहिर में इन्हीं ज़राए से फ़ायदा होता है लेकिन हक़ीक़त यह है कि तमाम ज़राय अल्लाह के हुक्म से काम करते हैं और जहां पर ज़रिया वह काम नहीं करता जो अल्लाह चाहता है तो अल्लाह अपनी तरफ़ से दूसरा इन्तिज़ाम कर देता है। जैसा कि ज़ाहिरी ज़राए के लिहाज़ से मज़कूरा क़िस्से में होना यह चाहिए था कि ग़रीब लोगों कि कश्ती ग़स्ब हो जाती इसलिए कि बादशाह के हरकारे आते और नई कश्ती देखते तो उन्हें पसंद आ जाती और उसको अपने साथ ले जाते और उनका ज़रिया–ए–मआश फ़ौत हो जाता लेकिन रिज़्क़ अल्लाह देता है और वह ऊपर से यूं ही नाज़िल नहीं कर देता और किसी की जेब में यूंही नहीं डाल देता, बल्कि किसी न किसी ज़रिये से रिज़्क़ अता करता है। इसलिए अल्लाह तआला ने इन ग़रीब लोगों के लिए एक ऐसा इन्तिज़ाम कर दिया कि उनकी

आमदनी का ज़रिया मुअत्तल नहीं हुआ।

इस वाक़्ये से यह समझना चाहिए कि रिज़्क़ मिलने का ज़रिया अल्लाह तआला ही पैदा करता है और उसको कारामद या बेकार भी वही बनाता है, मगर इन्सान की ग़ल्ती है कि वह इस ज़रिये को अपनी तख़्लीक़ समझता है और सोचता है कि हमने अपनी सोच से एक ज़रिया अख़्तियार किया, इसलिए हमें दौलत मिल गयी। लिहाज़ा इसमें किसी का फ़ज़्ल व करम शामिल नहीं है, हालांकि ग़ौर तलब बात यह है कि वह ज़रिया पैदा किसने किया और इसमें इफ़ादियत की तासीर किसने रखी। अगर वह ज़रिया मौजूद ही न होता तो उससे फ़ायदा उठाना कैसे मुमकिन होता। ज़ाहिर है जितने भी ज़राय हैं वह सब अल्लाह के पैदा किये हुए हैं और उनमें वही तासीर है जो उसने वदियत की है। छुरी में काटने की सलाहियत रखी है, तो अब वह काटने का ही ज़रिया बनेगी लेकिन अगर अल्लाह चाहे तो वह किसी दूसरे ज़रिये से उसकी यह ख़ासियत ख़त्म भी कर सकता है। मालूम यह हुआ कि तमाम ज़राय उसी के बनाए हुए हैं, लिहाज़ा वह जब चाहे उन्हें कारामद बना सकता है और जब चाहे उनमें तब्दीली भी कर सकता है।

दरिया पार करने के बाद हज़रत ख़िज़र (अलैहिस्सलाम) ने जिस लड़के की गर्दन दबा दी थी, उसके बारे में बताया कि उसके मां–बाप साहिबे ईमान थे जो अपना हर काम अल्लाह की रज़ा के लिए करते थे। उसकी ख़ुशनूदी के लिए ज़िन्दगी गुज़ारते थे और गुनाहों से बचते थे लिहाज़ा अल्लाह नहीं चाहता था कि मुस्तक़बिल में इनको इनकी औलाद परेशान करे और ज़ाहिरी ज़राय वाले निज़ाम की बुनियाद पर यह तय था कि उनका यह लड़का ग़लत राह पर पड़ जाता और ईमान की दौलत से महरूम हो जाता। ज़ाहिरी ज़राय के लिहाज़ से ऐसा इसलिए मुमकिन था कि शायद इस इलाक़े के हालात ख़राब रहे होंगे और वहां की नस्ल बिगड़ी हुई होगी। क्योंकि आदमी बुरी सोहबत से बिगड़ता है और साथियों के असर से मुतास्सिर होता है और जैसा माहौल होता है उसी रंग में रंग जाता है। इसीलिए अल्लाह तआला के इल्म में यह बात होगी कि यह लड़का मुस्तक़बिल में अपने गांव के बुरे माहौल का शिकार हो जाएगा और ऐसी बुरी सोहबत में फंस जाएगा कि फिर यह अपने मां–बाप के लिए एक मुसीबत होगा। चुनान्चे अल्लाह ने इस बुरे वक़्त से पहले ही मां–बाप को आज़माइश में पड़ने से बचा लिया और उनके ईमान की हिफाज़त फ़रमायी यानि ज़ाहिरी ज़राय के लिहाज़ से हालात के तहत जो कुछ होने वाला था अल्लाह ने अपने बन्दों की नेकी के पेशनज़र इसमें तब्दीली कर दी, गरचे फ़ौरी तौर पर लड़के की जुदायगी पर उन्हें सख़्त सदमा लाहक़ हुआ होगा मगर अल्लाह ने धीरे–धीरे उनका यह ग़म भुला दिया होगा और उन्हें इससे बेहतर औलाद से नवाज़ा होगा। इसलिए कि अल्लाह अपने मोमिन बन्दों को मुसीबत में मुब्तिला करता है तो उन्हें दोहरा अज्र देता है और अपना क़ुर्ब्रे ख़ास अता करता है।

सोहबत का असर ग़ैर मामूली होता है। दुनिया का निज़ाम यही है कि आप जिन लोगों की सोहबत में बैठेंगे वैसी ही चीज़ें आपके हाथ में आ जाएंगी। अगर साथी ख़राब मिल जाएं तो कितने लड़के हैं जो अपने साथियों की वजह से ख़राब हो जाते हैं और अगर साथी अच्छे मिल जाएं तो कितने ही लड़के हैं जो साथियों की वजह से अच्छे बन जाते हैं। अल्लाह तआला ने दुनिया का निज़ाम ही ऐसा रखा है कि यहां इन्सान–इन्सान से सीखता है और हालात उसके लिए हमवार होते चले जाते हैं, जिनकी बुनियाद पर वह काम अंजाम देता है। मगर नादान आदमी यह समझता है कि वह सबकुछ अपनी फ़हम व फ़रासत की वजह से कर रहा है।

हज़रत ख़िज़र (अलैहिस्सलाम) ने आख़िरी वाक़्ये की हक़ीक़त बयान करते हुए कहा कि हमने जिस दीवार को दुरुस्त किया था दरअस्ल वह दीवार दो यतीम बच्चों की थी, जिसके नीचे ख़ज़ाना दफ़न था और वह बच्चे इतने छोटे थे कि न उस ख़ज़ाने को निकाल सकते थे और अगर दीवार गिर जाती तो न ही उसकी हिफ़ाज़त कर सकते थे। नतीजा यह होता कि मुहल्ले वाले सब ख़ज़ाना लूट ले जाते और इन यतीम बच्चों का बहुत नुक़सान हो जाता। लेकिन चूंकि बच्चों के बाप नेक थे इसलिए अल्लाह ने वालिद की नेकी का सिला इन्हें दिया और यह चाहा कि जब यह बच्चे बालिग़ हों और इनमें कूव्वत पैदा हो जाए तब यह इस दफ़ीना को निकाल लें। ज़ाहिर है कि अल्लाह ने उनके साथ बाप की नेकी और रहम की बुनियाद पर यह मामला किया है। इससे पता चलता है कि आदमी की नेकी उसकी औलाद तक पहुंचती है और उससे फ़ायदा होता है।

योम-ए-आज़ादी का पैग़ाम

मौलाना ख़ालिद सैफ़ुल्लाह रहमानी

आज हमारा मुल्क आज़ाद है, उसके दरोबस्त आज़ाद हैं, हम ख़ुद उसकी तक़दीर के मालिक हैं और उसके स्याह व सफ़ेद का फ़ैसला करते हैं। लेकिन हमारी तारीख़ में एक ऐसा दौर भी गुज़रा है, जब हम ख़ुद अपने वतन में ग़ुलामी की ज़िन्दगी बसर करने पर मजबूर थे। हम उसके बारे में कोई फ़ैसला करने के मजाज़ नहीं थे, हमें यह आज़ादी क्योंकर हासिल हुई? इस आज़ादी के जबीन व आरिज़ पर किस–किस के ख़ूने शहादत की सुर्ख़ी है? ज़रूरी है कि हम अपनी तारीख़ के इन सपूतों, मादरे वतन के लायक़ फ़रज़न्दों और उसकी इज़्ज़त व नामूस के उन पासबानों की याद ताज़ा करें।

हिन्दुस्तान की आज़ादी की तारीख़ दुनिया के तमाम इन्क़िलाबात से इस हैसियत से अलग है कि हिन्दुस्तान की आज़ादी की लड़ाई में मज़ाहिब और मज़हबी क़ायदीन का नुमायां किरदार रहा है। बाबा–ए–क़ौम महात्मा गांधी जी, मुफ़स्सिर–ए–क़ुरआन मौलाना अबुल कलाम आज़ाद और सिख मज़हबी रहनुमा तारा सिंह, यह सारे लोग वह थे जो मज़हब की आग़ोश में पले और सारी ज़िन्दगी मज़हब के ज़ेरे साया गुज़ार दी।

1600 ईसवी में ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने हिन्दुस्तान में क़दम रखा और बतदरीज अपनी फ़ौज और पुलिस भी रखनी शुरू कर दी, यहां तक कि हिन्दुस्तानियों से अंग्रेज़ों का पहला मारका 1757 ईसवी में प्लासी के मैदान में पहले शहीदे आज़ादी सिराजुद्दौला के साथ हुआ। यह गोया अंग्रेज़ों की तरफ़ से इस अम्र का ऐलान था कि वह मुल्क में महज़ तिजारत पर क़नाअत करने के लिए तैयार नहीं हैं, बल्कि इस मुल्क की सियासी तक़दीर भी अपने हाथों में लेना चाहते हैं।

अंग्रेजों से दूसरा बड़ा मारका 1764ईसवी में बस्कर के मैदान में मीर क़ासिम को शिकस्त हुई, उधर मैसूर में फ़रमानरवा–ए–मैसूर से अंग्रेज़ों की तीन जंगें हो चुकी थीं, जिनमें दो बार अंग्रेज़ शिकस्त खा चुके थे। 1799 ईसवी में आख़िरी मारका–ए–मैसूर हुआ और बाज़ मुस्लिम वालियाने मुमलकत की ग़द्दारी और जफ़ाकारी के बाइस यह मारका भी हिन्दुस्तानियों के ख़िलाफ़ रहा। इसी मारका–ए–मैसूर ने 1806 ईसवी में इस तहरीक की सूरत अख़्तियार की जो ''ग़दर वेल्वर'' कहलाता है और जिसको बाज़ मोअर्रिख़ीन ने 1857 ईसवी की तहरीके आज़ादी का रिहर्सल क़रार दिया है।

जहां मुर्शिदाबाद और बक्सर की शिकस्त ने बंगाल से नवाह देहली तक अंग्रेज़ों को ग़लबा अता कर दिया, वहीं मैसूर की फ़तेह ने जुनूब में अंग्रेज़ों के लिए मज़ाहमत ख़त्म कर दी और हक़ीक़त यह है कि ख़ुद देहली में भी मुग़लिया हुकूमत की शमा–ए–सहरी 16 सितम्बर 1803 ईसवी ही को बुझ गयी थी, जिस दिन शंहशाहे आलम ने बर्तानिया की सरपरस्ती क़ुबूल कर ली थी।

हिन्दुस्तानी किसानों पर टैक्स का नावाजिब बोझ, मक़ामी सिनअतों की तबाही व बर्बादी और मुल्क के अस्ल बाशिन्दों के साथ तज़लील व तहक़ीर के सुलूक ने मुहिब्बाने वतन को बेचैन व बेक़रार कर दिया और यह बेक़रारी आख़िर 1857 ईसवी की तहरीक की सूरत आतिशफ़शां बनकर फूट पड़ी, यह वह नशा था जिसने हिन्दु और मुसलमान, ब्राहम्ण और शूद्र, ज़मीनदार और जागीरदार और ज़ारेअ व काश्तकार सभों को एक सफ़ में लाकर खड़ा किया, ग़ौर किया जाए और इन्साफ़ की नज़र से देखा जाए तो आज़ादी के लिए उन तमाम अहम मारकों में मुसलमान आगे–आगे थे और उन्होंने देश के दुश्मनों को ख़ूने जिगर के जाम भर–भर कर दिये कि उनका तिश्ना कामी दूर हो और वतन की इज़्ज़त और आबरू सलामत रह जाए।

अंग्रेज़ों ने हिन्दुस्तान में जो इलाक़े छीने थे, उनमें मराठों, राजपूताना और पंजाब का इलाक़ा छोड़कर क़रीब–क़रीब सभी मुसलमानों ही के ज़ेरे इक़्तिदार थे, इसलिए मुसलमान ही उनका ज़्यादा निशाना थे और फ़ितरी तौर पर मुसलमान ही उनसे नबरदआज़मा भी थे। सर विलियम म्यूर ने जो इंटेलिजेंस रिकार्ड जमा किया है, उसके मुताबिक़ ''बदज़ात मुसलमानों को इबरत दिलाने के लिए, झझर, बल्लभगढ़, फ़र्रुख़नगर के नवाबों और 24 शहज़ादों को फांसी पर लटकाया गया।''

..... (शेष पेज 13 पर)

सच्चाई क्या है?

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

ज़बान की हिफ़ाज़तः

"हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि0) से रिवायत है रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने इरशाद फ़रमायाः आदमी के झूठा होने के लिए बस यही काफ़ी है कि वह हर सुनी हुई बात को बयान कर दे।"

(सही मुस्लिमः 5)

हदीस शरीफ़ में यह एक बहुत बुनियादी उसूल बताया गया है। वाक़्या यह है कि जो लोग झूठ बोलते हैं, वह इसीलिए झूठ बोलते हैं कि उनको ज़्यादा बोलने की आदत होती है। ज़ाहिर है आदमी जब ज़्यादा बोलेगा और हर सुनी–सुनाई बात नक़ल करेगा तो वह झूठ बोल ही जाएगा। कई बार न चाहते हुए भी आदमी झूठ बोल ही जाता है, इसकी वजह यही होती है कि उसको तहक़ीक़ नहीं होती है कि कहां से कौन सी बात सुनी है, बस वह नक़ल कर देता है। हालांकि वह बात बिल्कुल ख़िलाफ़–ए–वाक़्या होती है, जिसके नतीजे में बाज़ मर्तबा बड़े नुक़सान सामने आ जाते हैं।

बात नक़ल करने की ज़रुरतः

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने इरशाद फ़रमाया कि आदमी के झूठ बोलने के लिए काफ़ी है कि वह जो बात सुने उसे नक़ल कर दे। इससे मालूम हुआ कि हर सुनी–सुनाई बात नक़ल नहीं करनी चाहिए, इसके बहुत नुक़सानात हैं। बात बिल्कुल तहक़ीक़ वाली हो, सच्ची बात हो तो भी कभी–कभी हर बात नक़ल कर देना बहुत ख़तरनाक होता है, इससे दिल टूट जाते हैं। जैसेः किसी मजलिस में कोई बात हो रही है और किसी ज़रूरत के तहत हो रही है तो वह मजलिस एक अमानत है, सुनने वाला सुन रहा है कि वहां किसी के बारे में ज़रूरतन कोई बात कही गयी जो बतौर ग़ीबत नहीं थी, तो वह बात उस मजलिस की हद तक दुरुस्त है, लेकिन अगर कोई इस बात को ले जाकर बाहर नक़ल कर दे, तो उसका नतीजा यह होगा कि बात बनने के बजाए बिगड़ेगी, इसीलिए हर सुनी–सुनाई बात नक़ल नहीं करनी चाहिए, चाहे वह सच्ची ही क्यों न हो।

सही बात यह है कि आदमी की यह आदत जब हद से ज़्यादा बढ़ जाती है तो इसका नतीजा यह होता है कि फिर वह हर तरह की बात नक़ल करता है, उसको तहक़ीक़ नहीं होती, मगर फिर भी बोलेगा कि फ़लां साहब ऐसा कह रहे थे और ख़ुदा न ख़्वास्ता किसी ने तहक़ीक़ कर ली कि चलो फ़लां साहब से चलकर मालूम करते हैं, जब वहां पहुंचे तो पता चला कि उन्होंने भी किसी दूसरे साहब का हवाला दे दिया कि वह कह रहे थे आख़िर में मालूम हुआ कि बात की कोई हक़ीक़त ही न थी, इसी को कहते हैं कि खोदा पहाड़ निकली चुहिया, यानि बात का बतंगड़ मगर हक़ीक़त से ख़ाली।

ग़ालिबन मौलाना मसऊद अली साहब (रह0) या और किसी के बारे में आता है कि अगर वह कोई ऐसी बात सुन लेते कि फ़लां ने ऐसा कहा, तो कहते चलो फ़लां के पास, फिर उसके पास जाते और पूछते कि क्या आपने ऐसा कहा? वह कहताः नहीं हमने तो नहीं कहा, मगर हमने फ़लां से सुना था, कहते चलो फ़लां के पास, जब उसके पास पहुंचते तो वह किसी और का नाम लेता, फिर वह उसके पास उन सब लोगों को लेकर पहुंचते और बात की तहक़ीक़ करते, यहां तक कि कभी–कभी पूरी जमाअत हो जाती थी, फिर जब आख़िर में पहुंचते तो पता चलता कि बात बहुत थोड़ी थी, ऐसे ही एक मजलिस में बात चल रही थी,

मगर हम समझ नहीं सके, तो नतीजा यह निकला कि बात कुछ भी नहीं थी, बिल्कुल बेहक़ीक़त थी।

ज़ाहिर है हर आदमी इस तरह तहक़ीक़ नहीं कर सकता, यह तो सख़्त मशगूलियत का ज़माना है, कहां किसी को फ़ुरसत है, किसी को तहक़ीक़ का मौक़ा नहीं, किसी के पास फ़ुरसत नहीं, लिहाज़ा आदमी ख़ुद ही मोहतात रहे और बेहतर है कि आदमी कम बोले।

ज़बान की बेएहतियाती का अंजामः

ज़बान की हिफ़ाज़त का मसला बड़ा अहम है। हदीसों में आता है कि अक्सर लोग ज़बान की वजह से जहन्नम में दाख़िल किये जाएंगे। आदमी ज़बान को छोटा समझता है कि ज़बान से फ़क़त एक बात ही तो कही है। हालांकि ज़बान से एक बात ही कही है मगर ग़ौर तलब बात यह है कि इस बात का नतीजा और इसके असरात क्या पड़ते हैं? निकाह के मौक़े पर हम अक्सर यह बात कहते हैं कि अगर आदमी यह समझता है कि वह ज़बान से जो कहता है वह छोटी सी बात है, उसका कोई नतीजा नहीं और न ही उसकी कोई हक़ीक़त है, तो आप यह ग़ौर कीजिए कि निकाह में क्या होता है? सबकुछ होने के बाद दूल्हा सिर्फ़ एक जुम्ला कहता है कि ''मैंने कुबूल किया'' और यह कितना ज़बरदस्त जुम्ला है, मानो इस छोटे से जुम्ले से ज़िन्दगी का रुख़ बदल जाता है और एक नई ज़िन्दगी की शुरूआत हो जाती है। ऐसे ही एक छोटा सा जुम्ला कई बार आदमी कह देता है कि ''जाओ तुमको हमने तलाक़ दे दी'' इसमें भी आदमी ने थोड़ी सी ज़बा नही हिलाई है और कुछ नहीं किया है, लेकिन इसका नतीजा यह निकला कि ख़ानदान टूट गए। इसीलिए यह दलील है कि आदमी ज़बान से जो बात कहता है उसको बेहक़ीक़त समझता है, लेकिन अक्सर व बेशतर उसके बड़े गहने नतीजे निकलते हैं, लिहाज़ा ज़बान का इस्तेमाल सोच–समझ कर करना चाहिए।

ज़बान की बेएहतियाती पर जो संगीन नताएज निकलते हैं, उनका अंदाज़ा हज़रत मआज़ (रज़ि0) की इस हदीस से होता है जिसमें हैः "ऐ मआज़! अल्लाह तुम्हारा भला करे, लोगों को मुंह के बल आग में उनकी ज़बान की बक–बक ही तो ले जाएगी।"

(सुनन तिरमिज़ीः 2825)

हदीस में साफ़ बात है कि जहन्नम में अक्सर लोग मुंह के बल इसी ज़बान के नतीजे में डाले जाएंगे और इसको रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने दंराती से ताबीर फ़रमाया है, जिससे खेत काटे जाते हैं। इसी तरह ज़बान से दिल काटे जाते हैं, समाज काटा जाता है, मुहब्बतें काटी जाती हैं, आदमी जब ज़बान चलाना शुरू करता है तो यह नहीं देखता कि क्या कट रहा है, जैसे दंराती से जब खेत काटना शुरू करता है तो इसको पता नहीं चलता कि कितनी घास काट दी और साथ ही एक–आध सांप भी कट गया। यह वाक़्या है कि घास का मुट्ठा दंराती से काटने के लिए दबाया और साथ ही सांप भी कट गया। तो दंराती से क्या कटेगा, कुछ पता नहीं है, ठीक उसी तरह ज़बान भी दंराती की तरह है जो बिल्कुल क़ैंची की तरह चलती है और इसका नतीजा क्या हो रहा है कि आदमी यह नहीं देखता, बस बोलता चला जाता है, इसीलिए सबसे बेहतर बात यही है कि आदमी ज़्यादातर ख़ामोशी अख़्तियार करे, हदीस में भी हैः

''जो ख़ामोश रहा वह बचा रहा।''

(तिरमिज़ीः 2689)

ज़ाहिर है जब आदमी ज़्यादा बोलेगा तो उल्टा–सीधा ही बोलेगा। लिहाज़ा ज़बान की हिफ़ाज़त की जाए, आदमी तोल–तोल कर बोले, जो लोग ज़्यादा बोलते हैं वही यह काम करते हैं कहीं की बात सुनी कहीं लगायी और कहीं की सुनकर कहीं लगायी, उनको बोलने का मर्ज़ होता है। उनके पेट में कुछ रहता नहीं है। इसका बड़ा नुक़सान होता है। इसलिए इस सिलसिले में बड़ी एहतियात करने की ज़रूरत है। कौन सी बात कहने की है और कौन सी नहीं कहने की है और क्या बोलना है और क्या नहीं बोलना है, इसमें बहुत मोहतात रहना चाहिए।

निकाह के चन्द मसाएल (3)

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

लड़की से इजाज़त लेना ज़रूरी है:

औरत जब आक़िला, बालिग़ा तो उसकी इजाज़त के बग़ैर वली बाप–भाई वग़ैरह के लिए भी उसका निकाह कराना जाएज़ नहीं है। चुनान्चे हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि0) फ़रमाते हैं कि नबी करीम (स0अ0व0) ने फ़रमायाः सैबा का निकाह नहीं किया जाएगा, यहां तक कि क़ौली सराहत के साथ उसकी इजाज़त ले ली जाए, लोगों ने कहाः ऐ अल्लाह के रसूल! बाकरा का इजाज़त देना किस तरह होगा? फ़रमायाः ख़ामोश रहने से।

(बुख़ारीः 5136, मुस्लिमः 1419, शामीः 2/334)

लड़की से इजाज़त महरम को लेना चाहिए:

बेहतर यह है कि लड़की से निकाह की इजाज़त उसका वली या कम से कम कोई महरम ले, ताकि इसका रद्दे अमल (ख़ामोश रहना, हल्के आवाज़ में रोना वग़ैरह) दिख सके, यह इजाज़त ऐन निकाह ही के वक़्त ज़रूरी नहीं है, घर में मेहमान ख़्वातीन के आने से पहले भी ली जा सकती है, अगर नामहरम इजाज़त लें तो यह इजाज़त मोतबर होगी, अगरचे यह बेहतर नहीं है, इसलिए कि इससे बेपर्दगी होती है।

(शामीः 1/499)

इजाज़त लेते वक़्त गवाहों की मौजूदगी शर्त नहीं है:

लड़की से इजाज़त लेते वक़्त गवाहों की मौजूदगी शर्त नहीं है, अलबत्ता इस ऐतबार से बेहतर है कि अगर बाद में लड़की इससे इनकार करे कि उससे इजाज़त ले ली गयी थी तो उन गवाहों के ज़रिये इसको साबित किया जा सके, लेकिन उसके लिए उन्हीं गवाहों का होना ज़रूरी नहीं है, जिनको अक़्दे निकाह के लिए गवाह बनाना है, लिहाज़ा बेहतर यह है कि उस वक़्त गवाह मौजूद रहें और ज़्यादा बेहतर होगा कि यह भी औरत के महारिम में से हों। (हिन्दियाः 1/294)

इजाज़त का तरीक़ाः

अगर वली या उसका भेजा हुआ कोई शख़्स बाकरा यानि कुंवारी लड़की पास इजाज़त लेने जाए और उससे इजाज़त मांगे कि "फ़लां बिन फ़लां से तुम्हारा निकाह करा दिया जाए?" या उससे मिलते–जुलते अल्फ़ाज़ अदा किये, चाहे मेहर का तज़किरा करे या न करे और लड़की उसके जवाब में ख़ामोश रहे या मुस्करा दे या इस तरह रोए जिसको रुख़्सती के ग़म पर महमूल किया जा सकता हो, तो चाहे ज़बान से इजाज़त न भी दे, इन चीज़ों को इजाज़त का इशारा समझा जाएगा। इसीलिए ऊपर हदीस में ख़ामोशी को इजाज़त पर महमूल किया गया है, लिहाज़ा इन सब चीज़ों को भी ख़ामोशी के दर्जे में माना जाएगा।

लेकिन अगर लड़की उस वक़्त इस तरह बुलन्द आवाज़ से रोने लगे जिससे समझ में आए कि उसे निकाह से तकलीफ़ है तो जब तक वह सराहत के साथ इजाज़त न दे या रजिस्टर पर दस्तख़त न कर दे उस वक़्त तक इसको इजाज़त पर महमूल नहीं करेंगे।

लड़की अगर शैबा (यानि तलाक़शुदा या बेवा) हो, तो सिर्फ़ ख़ामोशी को उसकी इजाज़त नहीं समझा जाएगा, उसका सराहत से इजाज़त देना ज़रूरी होगा, जैसा कि ऊपर हदीस में बताया गया है।

(शामीः 2/324)

लड़की से इजाज़त लिए बग़ैर निकाहः

अगर लड़की से इजाज़त लिए बग़ैर निकाह कर दिया गया, तो अगर बाद में इत्तेला होने के बाद उसने ज़बानी इजाज़त दे दी या ज़बान से तो नहीं दी, लेकिन रजिस्टर पर दस्तख़त कर दिये, या बग़ैर कुछ बोले रुख़्सती के लिए तैयार हो गयी तो अक़्द सही हो जाएगा, लेकिन अगर वह रिश्ते से इनकार कर दे तो अक़्द बातिल होगा।

निकाह पढ़ाते वक़्त लड़की या उसके बाप के नाम में ग़लती हो जानाः

बेहतर यह है कि निकाह पढ़ाते वक़्त लड़की के नाम के साथ उसके वालिद का भी नाम ले लिया जाए, ताकि लड़की का अच्छी तरह तआरुफ़ हो जाए,

लेकिन अगर गवाह लड़की को जानते हों तो बाप का नाम लिए बग़ैर भी निकाह हो जाएगा।

(हिन्दियाः 1/268)

अगर लड़की मजलिसे निकाह में मौजूद नहीं थी जैसा कि आम चलन है और क़ाज़ी ने ईजाब कराते वक़्त लड़की या उसके बाप के नाम में ग़लती कर दी तो निकाह मुनअक़िद नहीं होगा, इसलिए कि लड़की या बा पके नाम में ग़लती की वजह से लड़की मझूल हो गयी है और अगर लड़की मजलिसे निकाह में मौजूद थी और अगर लड़की या उसके बाप के नाम में ग़लती हो गयी, लेकिन क़ाज़ी ने लड़की की तरफ़ इशारा करके ईजाब कराया तो निकाह मुनअक़िद हो जाएगा।

(शामीः 2/298)

जिस लड़की के दो नाम हों:

अगर लड़की का नाम बचपन में कुछ और रखा गया, फिर बाद में बदलकर कुछ और रखा गया तो अस्ल यह है कि दोनों नाम से ईजाब किया जाएगा, लेकिन एक नाम लेना हो तो दूसरा नाम अगर मारूफ़ हो गया तो उसी को लिया जाएगा, अगर पहला वाला ही ज़्यादा मारूफ़ हो तो पहला लिया जाएगा।

(हिन्दियाः 1/269)

दो बहनों का एक साथ निकाह और नाम में ग़लती:

दो बहनों का एक साथ अलग–अलग लड़कों से निकाह करना था, हर लड़के का जिस बहन से निकाह तय था, उसी लड़के का नाम लेकर इजाज़त ली गयी, लेकिन मजलिसे निकाह में क़ाज़ी ने ग़लती कर दी और ईजाब करते वक़्त जिससे निकाह होना था उस लड़की के बजाए दूसरी लड़की का नाम ले लिया तो निकाह मुनअक़िद नहीं होगा, बल्कि निकाहे फ़ुज़ूली के दर्जे में होगा, इसलिए कि लड़की ने जिस लड़के से निकाह की इजाज़त दी थी, उससे उसका निकाह कराया गया, लिहाज़ा अगर जिससे रिश्ता तय था, उसी से निकाह कराना है तो दोनों लड़कियों से कहलवा दिया जाए कि जिससे निकाह पढ़ाया गया उससे निकाह पर वह राज़ी नहीं हैं, फिर जिनसे रिश्ता तय था उनसे निकाह पढ़ा दिया जाएगा और अगर लड़की–लड़का और दोनों के घरवाले इस पर राज़ी हैं कि जिससे निकाह पढ़ाया गया है उससे रिश्ता क़ायम रखने में कोई हर्ज नहीं है तो अगर ग़लती से जिस लड़के से ईजाब हो गया था बाद में लड़की से उसकी इजाज़त ले ली जाएगी या उसकी रुख़्सती उसके यहां उसकी रज़ामन्दी से करा दी जाए तो अब फ़ुज़ूल की हैसियत से कराया हुआ निकाह मुकम्मल तौर से हो जाएगा।

और अगर रुख़्सती पहले से तयशुदा रिश्ते के मुआफ़िक़ करायी गयी, लेकिन ऊपर बतायी हुई तफ़सील के मुताबिक़ लड़की से इनकार कराके नये सिरे से ईजाब कुबूल नहीं कराया गया, तो यह रुख़्सती ठीक नही है। दोनों से कहा जाएगा कि फ़ौरन अलग–अलग हों और फिर से निकाह करें।

(हिन्दियाः 1/299, किताबुल मसाएलः 4/105)

नाबालिग़ लड़के या लड़की का निकाह:

शरअन नाबालिग़ लड़के या लड़की का निकाह जाएज़ है और अगर नाबालिग़ी की हालत में उनका निकाह करना है तो ईजाब व कुबूल उनकी तरफ़ से उनका वली करेगा, अगर कोई लड़की या लड़का बालिग़ हो लेकिन मजनून हो तो उसका हुक्म भी नाबालिग़ का है। (शामीः 2/321)

बालिग़ा लड़की की इजाज़त के बाद इनकार:

अगर वली' उसके वकील या फ़रसतादह ने लड़की से इजाज़त तलब की और उसने सराहत से या ख़ामोश रहकर इजाज़त दे दी, तो यह एक तरफ़ की तौकील है, लिहाज़ा अगर उसने बाद में इजाज़त से रुजूअ कर लिया और रिश्ते से इनकार कर दिया, लेकिन उसके इनकार का वली को पता नहीं चला और उसने निकाह करवा दिया तो यह निकाह मुनअक़िद हो जाएगा, लेकिन अगर निकाह करवाने से पहले वली को लड़की के इनकार कर पता चल जाए तो उसे निकाह कराने का अख़्तियार कम हो जाएगा, लिहाज़ा उसे वकालत से माज़ूल कर दिया गया है लिहाज़ा अगर वह निकाह करा भी दे तो मुनअक़िद नहीं होगा। (शामीः 334–335)

ग़ैर मुताल्लिक़ इजाज़त ले और लड़की ख़ामोश रहे:

ऊपर बताया गया कि अगर वली या उसका भेजा गया शख़्स कुंवारी लड़की से इजाज़त तलब करे और

वह ख़ामोश रहे, तो यह उसकी इजाज़त की दलील है, हदीस में सराहत के साथ इसको इजाज़त क़रार दिया गया है, लेकिन अगर वली के अलावा कोई ग़ैर मुताल्लिक़ शख़्स चाहे वह दूर का वली ही क्यों न हो, उससे इजाज़त तलब करे तो सिर्फ़ उसका ख़ामोश रहना इजाज़त की दलील नहीं है, हो सकता है कि वह इस बात की परवाह न करने की वजह से ख़ामोश हो, लिहाज़ा उनके इजाज़त तलब करने पर इजाज़त उसी वक़्त समझी जाएगी, जब वह सराहत से रज़ामंदी का इज़हार कर दे, या दलालतन उसकी रज़ामंदी वाली कोई बात पायी जाए, जैसेः मेहर कुबूल कर ले या वती पर कुदरत दे दे।

(शामीः 2/326–327)

जहां तक शैबा का ताल्लुक़ है तो ऊपर बयान किया जा चुका है कि उसकी ख़ामोशी रज़ामन्दी नहीं मानी जाएगी, या वह सराहत से इजाज़त दे, या ऐसा कोई क़रीना पाया जाए जो रज़ामन्दी पर दलालत करता हो, जैसेः मेहर कुबूल वग़ैरह। (शामीः 2/327)

कुंवारी लड़की कौन हैः

यहां कुंवारी से मुदार वह लड़की है जिसकी पहले शादी न हुई हो चाहे हक़ीक़त में किसी वजह से (जैसेः उछलने–कूदने या उम्र ज़्यादा हो जाने जैसी किसी चीज़ की वजह से) उसका पर्दा–ए–बुकारत ज़ाएल हो गया हो, इसी तरह अगर किसी औरत का पर्दा–ए–बुकारत ज़िना के सबब ज़ाएल हो गया तो वह भी बाकरा के हुक्म में होगी, इल्ला यह कि ज़िना की बहुत ज़्यादा शोहरत हो गयी हो!

(हिन्दियाः 2/290)

किसी शर्त पर निकाहः

निकाह को किसी शर्त पर मुअल्लक़ करके करना जाएज़ नहीं है, लेकिन अगर किसी शर्त पर मुअल्लक़ किया तो अगर वह ऐसी शर्त हो कि पायी भी जा सकती हो और न भी पायी जा सकती हो, जैसेः कहे कि अगर फ़लां राज़ी हुआ तो मैंने निकाह किया या कुबूल किया तो निकाह मुनअक़िद नहीं होगा और गुज़रे हुए किसी फ़ेल पर मुअल्लक़ करके निकाह किया जो यक़ीनी तौर पर पेश आ चुका था तो निकाह हो जाएगा। (शामीः 2/320)

शेषः यौम–ए–आज़ादी का पैग़ाम

इसलिए यह एक हक़ीक़त है कि हिन्दुस्तान की जंगे आज़ादी में मुसलमानों का सबसे नुमायां हिस्सा रहा है और उन्होंने इसमें पेशक़दमी भी की है और चूंकि हर दौर में मुसलमान हर नए क़दम के लिए उलमा की तरफ़ देखते रहे हैं और उनकी उंगली के इशारे में अपने लिए दीन व दुनिया की भलाई तसव्वुर की है, इसलिए उनकी हर तहरीक का रिश्ता उलमा ही से जाकर जुड़ता है।

सलामती हो उन मुजाहिदीने आज़ादी पर, उनकी रूहों पर, उनकी ख़्वाबगाहों पर कि उनकी शहादत के ख़ून व लहू की सुर्ख़ी ने आज उनके वतन को लालाज़ार बना दिया है। ग़ुलामी की जंजीरे कट चुकी हैं। ग़ैरमुल्की बादशाहत के आहनी लिबास तार–तार हो चुके हैं, उनमें कुछ ने अपनी आंखों को इस आज़ादी से ठंडा किया है। कुछ हसरतों के साथ ख़ुदा के यहां पहले ही चले गए, कुछ के नाम तारीख़ के सफ़हात ने याद रखे हैं और कितने ही हैं कि ख़ुदा के सिवा उनकी कुर्बानियों, फ़िदाकारियों और जांबाज़ियों को कोई नहीं जानता।

हम फ़रज़न्दाने वतन का फ़र्ज़ है कि आज़ादी के इस चिराग़ को रोशन रखने की कोशिश करे, हम ज़ात–पात, मज़हब व बिरादरी और ज़बान की सतह से ऊपर उठकर एक सच्चे और ईमानदार हिन्दुस्तानी होने का सुबूत दें, यहां अक़्लियतें ख़ुद को महफ़ूज़ समझें, अक्सरियत और अक़्लियत के लिए इंसाफ़ का एक ही पैमाना हो, वह मज़दूर कि बुलन्द व बाला इमारतें, सरसब्ज़ व शादाब बाग़ात, ख़ूबसूरत नहरें और साफ़–शफ़्फ़ाफ़ सड़कें सब उन्हीं के पसीनों की रहीने मिन्नत हैं, उनको उनका हक़ मिले और हर घर में मसर्रत व ख़ुशहाली और इन्साफ़ का चिराग़ जल सके, वह आज़ादी जो दिलों को सुकून दे, जो इम्तियाज़ व तफ़रीक़ की दीवारों को ढा दे, जो बुलन्द व बाला इमारतों में रहने वालों में भी ग़रीबों की झोंपड़ियों से मुहब्बत पैदा कर दे, जहां मज़हबी नफ़रत की बुनियाद न हो, बल्कि मुख़्तलिफ़ मज़ाहिब की रंगा–रंगी उसको गुलदस्ते का मिस्दाक बना दे किः

गुलहाए रंगारंग से है ज़ीनते चमन

ख़ालिक़-ए-हक़ीक़ी का निज़ाम-ए-अर्ज़ी व फ़ल्की

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

आसमान की बेदाग़ बनावट, उसकी बेऐब सजावट, उसकी दिलकशी, उसका बेमिसाल निज़ाम, उसकी ऊंचाई, उसकी वुसअत, उसके चांद–सूरज, उसके सितारे व सय्यारे, उसका निज़ामे शम्सी, उसकी कहकशांए, गरज़ पूरा फ़ल्की निज़ाम, उसका जमाव, उसका कसाव, उसका इन्तिहाई हैरतअंगेज़ हिसाबी निज़ाम कि हज़ारों लाखों सालों से एक सेकेण्ड का भी फ़र्क़ नहीं। कोई दिल पर हाथ रखकर बताए कि यह सब ख़ुद ब ख़ुद वजूद में आया है। इन्सान जब तक ''ख़ुद ब ख़ुद'' के अंधे कुएं से बाहर नहीं निकलेगा, तब तक उसमें निज़ामे कायनात में ग़ौर व फ़िक्र करने की समझ कैसे आएगी। आसमान क़ुरआनी शहादत के मुताबिक़ मज़बूत बनावट पर बनी अल्लाह की मख़लूक़ है। फिर भी यह मान लिया जाए कि हमारी नज़रों की आख़िरी रसाई है, तब भी इसमें कोई झोल, कोई ख़ोल, कोई रख़्ना, कोई शिगाफ़, कोई छेद, कोई दराज़ कोई पेवन्द, कोई तरमीम, कोई इंच–इंच, कोई नाहमवारी हज़ारों लाखों सालों में एक दफ़ा भी क्यों पैदा नहीं हुई या क्यों नज़र नहीं आयी। सच्ची बात यह है कि ग़ौर करने वालों के लिए तन्हा यही एक शहादत अल्लाह की वहदानियत और उसके कालिमे तसर्रुफ़ की तरफ़ से जानने के लिए काफ़ी है। ऐसा निज़ाम न बेख़ुदा चल सकता है, न बहुत सारे ख़ुदा मिलकर ऐसा मरबूत निज़ाम वाज़ेह कर सकते हैं, जिसकी हर कड़ी दूसरी कड़ी से यूं मिली हुई है कि पूरा निज़ाम–ए–अर्ज़ी व फ़ल्की एक वहदत नज़र आता है।

ज़मीन' इसका फ़ैलाव, इसकी वुसअत, उसकी हमवारी, इसमें चलने–फिरने की आसानी, जोतने–बोने की सलाहियत, न इतनी सख़्त की खोदा न जा सके, न इतनी नर्म की पांव धसने लगे, इसकी हर चीज़ ऐन इन्सानी फ़ितरत के मुताबिक़, उसकी हर नेमत इन्सानी ज़रूरत के ऐन मुनासिब, यह सब कोई बताए कि यह सब अपनेआप वजूद में आ गया, या एक ख़ालिक़ ख़ल्लाक़ियत, एक सानेअ की सनई और एक हाकिम की हुकूमत और एक क़ादिर की क़ुदरत के जलवे हैं जो हर तरफ़ बिखरे नज़र आते हैं। ज़मीन' उसके पहाड़, उसके समन्दर, उसके अज़ीम सेहरा, उसके नशेबी हिस्से, उसके बालाई टुकड़े, उसकी आबादी का फैलाव, उसमें मौजूद ख़ज़ाने जो ऐन इन्सानी ज़रूरत के मुताबिक़ हैं। इन्सानी आबादी के तनासुब से होने वाली इन्सानी तरक़्क़ियां इन्सानी हौसलों और ज़मीनी ख़ज़ानों के दरमियान पाया जाने वाला इन्तिहाई हसीन रब्त, कभी ऐसा नहीं हुआ कि इन्सानी हौसलामन्दियों की तकमील से ज़मीन के ख़ज़ाने आजिज़ हुए और न कभी ऐसा हुआ कि ज़मीनी बेपनाह ज़राए व ख़ज़ानों से फ़ायदा उठाने से इन्सान आजिज़ रहा। जिस वक़्त जिस चीज़ या जिस तरक़्क़ी की ज़रूरत इन्सानी कुल आबादी ने महसूस की, ज़मीन में उस ज़रूरत की तकमील का सामान नज़र आया और इन्सानी क़ाबिलियत भी इल्म व फ़न व जदीद टेक्नालॉजी के ज़रिये उसी क़द्र बढ़ा दी गयी। क्या ग़ौर व फ़िक्र करने वालों के लिए इसमें कोई सबक़ नहीं है। दसियों हज़ार साल से करोड़ो–अरबों इन्सान इस ज़मीन से फ़ायदा उठा रहे हैं और आज तक उसके ख़ज़ाने खाली नहीं हुए जबकि दूसरे सय्यारों का हाल यह है कि वहां अभी तक ज़िन्दगी के आसार भी बावजूद कोशिशों के दरयाफ़्त नहीं किये जा सके। क्या यह सारी चीज़ें अल्लटप ख़ुद ब ख़ुद वजूद में आ गयीं कि बस एक धमाका हो गया, जिसने तमाम इन्सानी फ़ितरी तक़ाज़ों की तकमील कर डाली। आख़िर इतनी समझ भी इन्सानों को नहीं आती कि धमाके तरतीब बिगाड़ते हैं, बनाते नहीं हैं। यह सब

एक पैदा करने वाले का करिश्मा है, जिसने अपनी मख़लूक़ की एक–एक ज़रूरत का ख़्याल रखा।

"तुमने जो मांगा उसने वह सब तुम्हें दिया, अगर तुम अल्लाह की नेमतों को शुमार करना चाहो तो उनको अपने अहाते में नहीं ले सकते हो। वाक़ई इन्सान कितना ज़ालिम और कैसा नाशुक्रा है।"

बाज़ मुश्रिक क़ौमों ने आसमान व ज़मीन ही को देवता बना दिया। ग़ौर करने वाले समझते हैं कि यह एक ख़ालिक़ की बनायी हुई मख़लूक़ है, जो मुसलसल अपने काम में लगी हुई है। कहने वाले ने सच कहा है कि इस निज़ाम–ए–आलम में आकाश देवता और धरती माता की कोई गुंजाइश नहीं, न इसमें इल्हाद व दहरियत की हिमाक़त समा सकती है। न शिर्क व कुफ़्र की ग़लाज़त के लिए इसमें कोई जगह है। इस पूरे निज़ाम–ए–कायनात का एक और सिर्फ़ एक खुदा है। अल्लाह के अलावा कोई माबूद नहीं, कोई आला नहीं, कोई रब नहीं, कोई हाकिम व ख़ालिक़ नहीं, बस सुनने वाले कान चाहें।

रात–दिन का इख़्तिलाफ़ कि एक सरापा तारीकी व दूसरा मुजस्सिम नूर व रोशनी, रात की तारीकी अपने अन्दर सुकून व आराम के ख़ज़ाने रखती है और दिन का उजाला अपनी फ़ितरत के लिहाज़ से काम व जद्दोजहद का तक़ाज़ा पैदा करता है। यही ऐन इन्सानी फ़ितरत है। काम फिर आराम, फिर काम फिर आराम। हज़ारों साल हुए न इन्सानी फ़ितरत में तब्दीली हुई, न रात–दिन के निज़ाम में कोई फ़र्क़ आया, शब व रोज़ की गर्दिश के साथ इन्सानी फ़ितरत की हम आहंगी क्या खुद ब खुद वजूद में आयी। ग़ौर किया जाए इस निज़ाम का हस्बे मामूल जारी होना उसके मामूली होने की दलील नहीं है। कुदरत के करिश्मों को ग़ौर से देखा जाए तो यहां हर हस्बे मामूल चीज़ इस क़द्र ग़ैर मामूली व अज़ीम है कि इन्सानी अक़्ल मुजस्सिम हैरत बन जाए। रात व दिन की क़द्र व क़ीमत उन लोगों से पूछी जाए जहां कई–कई महीनों तक रात फिर कई महीनों तक दिन रहता है। अल्लाह तआला ने यही सवाल क़ायम करके इन्सानों पर अपना एहसान जताया है।

"कहिये तुम्हारा क्या ख़्याल है अगर अल्लाह तआला तुम पर रात को क़याम के दिन तक हमेशा के लिए मुक़र्रर कर दे तो अल्लाह के अलावा कौन माबूद है जो तुम्हारे पास रोशनी ले आए, क्या तुम सुनते नहीं हो, आप कहिये तुम्हारा क्या ख़्याल है अगर अल्लाह तआला तुम्हारे लिए हमेशा के वास्ते क़यामत के दिन तक दिन ही दिन बना दे तो अल्लाह के अलावा कौन माबूद है जो तुम्हें ऐसी रात फ़राहम करे जिसमें तुम सुकून हासिल करो। क्या तुम देखने नहीं हो कि यह अल्लाह की रहमत है जिसने तुम्हारे लिए रात–दिन बनाए, ताकि तुम उसमें सुकून हासिल कर सको और उसमें अल्लाह के फ़ज़्ल को तलाश कर सको, ताकि अल्लाह का शुक्र अदा कर सको।"

अल्लाह का यह भी एक बेपनाह एहसान है कि उसने कश्तियों को समन्दर में तैरने की कैफ़ियत अता की, अगर अल्लाह तआला हर चीज़ को पानी में डुबो देने वाली बनाता तो यह हज़ारों मील वसीअ व अरीज़ समन्दर इन्सानों के लिए बराए नाम काम आता, लेकिन इन जहाज़ों और कश्तियों के ज़रिये इन्सान लगभग समन्दर के बहुत बड़े हिस्से से फ़ायदा उठाता है। तिजारतें इन्हीं से क़ायम हैं, समन्दर में मौजूद मोती और मूंगे इसके साथ–साथ सामाने आराइश सबसे इन्सान फ़ायदा उठाता है। ख़ासकर समन्दरी सफ़र और तिजारत उसके लिए आसान बनाए गए। इसी का नतीजा है कि हर तरह का सामान हर जगह पहुंचाया जाता है। जिससे लोग बहुत फ़ायदा उठाते हैं। वरना एक सामान बेज़रूरत एक ही जगह पड़ा रहता और दूसरी तरफ़ ज़रूरतमंद लोग महरूम रह जाते।

अल्लाह ने वह चीज़ें भी इनायत की जो लोगों को फ़ायदा पहुंचाती है। इनमें मिर्च–मसालों से लेकर ज़रूरत की बड़ी से बड़ी चीज़ आ गयी। नफ़ा रसानी में आसमान, समन्दर और जहाज़ों का किरदार फ़रामोश नहीं किया जा सकता। अल्लाह के अलावा है कौन जिसने हज़ारों टन वज़नी जहाज़ को समन्दर पर रवां–दवां कर दिया, जबकि एक मामूली कंकड़ भी इसमें डूब जाता है। दूसरे यह कि ख़ुश्की के सफ़र में इन्सान या जानवर को खुद चलना पड़ता है जबकि समन्दरी सफ़र में बादबानी कश्तियों को हवा के ख़ास रुख़ पर कर देना काफ़ी होता है। फिर वह खुद ही

पानी पर चलने लगती हैं अलग से मज़ीद मेहनत की ज़रूरत नहीं रहती। इसमें कुदरत का करिश्मा और ज़्यादा नुमायां तौर पर नज़र आता है वरना ख़ुश्की का सफ़र भी अल्लाह ही की नेमत है। लेकिन अल्लाह ने मिसाल समन्दर के सफ़र की दी है, इसमें इन्सानी मेहनत ख़ुश्की के मुक़ाबले में बहुत कम और अल्लाह का फ़ज़्ल बेहद नुमायां नज़र आता है। वैसे हर चीज़ अल्लाह के फ़ज़्ल से होती है।

अल्लाह ने कुरआन मजीद में बारिश के पानी को मुबारक फ़रमाया (हमने आसमान से बाबरकत पानी उतारा) जो चीज़ अपने अन्दर बहुत ख़ैर व भलाई रखे उसे मुबारक कहते हैं। बारिश के पानी से इन्सान और जानवर दोनों सैराब होते हैं। इससे चारा व ग़ल्ला होता है जो इन्सान व जानवर दोनों की भूख मिटाता है। गोया यह मुबारक पानी इन्सान व हैवान दोनों की भूख व प्यास मिटाने के काम आता है। जानवरों के सैराब होने से उनके थन दूध से भर जाते हैं, जो इन्सानों की ग़िज़ा का अहम तरीन उन्सुर है। इससे ख़ुद जानवर भी फ़रबा होते हैं, जानवर ख़ुद भी इन्सानी ग़िज़ा हैं, इसी से जानवरों में ताक़त व क़ूव्वत आती है, इसके ज़रिये बहुत सारी इन्सानी ज़रूरियात पूरी होती हैं। जानवर फ़रबा व ताक़तवर हों तो इस पर सफ़र आसान होता है, वरना सफ़र मुश्किल होकर रह जाए, नुज़ूले कुरआन के वक़्त नक़्ल व हमल और आमद–रफ़्त का ज़रिया जानवर ही थे।

इसी बारिश से ज़मीन लहलहा उठती है और पूरी ज़मीन पर हसीन सब्ज़े की चादर बिछ जाती है। यह मन्ज़र इन्सानी जमालियाती हिस की तस्कीन करता है। बारिश क़तरात की शक्ल में इन्तिहाई दिलकश तरीक़े से बरसती है। वरना मनो व टनों बादल एकबारगी फट पड़े तो पता नहीं कितनी तबाही मच जाए। बारिश से पहले ख़ुशगवार हवाएं इन्सानी तबियत को कैफ़ व इम्बिसात से मामूर करती है। इस ज़माने के लिहाज़ से देखें तो यही पानी बड़े–बड़े डैम में महफ़ूज़ रखा जाता है जिससे हस्बे ज़रूरत फ़ायदा उठाया जाता है। बिजली की फ़राहमी में भी बारिश का इन्तिहाई अमल–दख़ल है। इसी पानी को सात सतह पर स्टोर करके पूरी क़ूव्वत के साथ नीचे बहाया जाता है। जिससे बिजली की तवानाई हासिल की जाती है। इसी तवानाई से आज क़रिया–क़रिया रोशन है। यही पानी पहाड़ों की चोटियों पर बर्फ़ की शक्ल में महफ़ूज़ रहता है फिर वहीं से इन्तिहाई साफ़–शफ़्फ़ाफ़ पीने का पानी मुहैया होता है। बहरहाल यह इन्तिहाई बाबरकत निहायत मुफ़ीद पानी है जिससे हज़ारों साल से इन्सान फ़ैज़याब होता आया है, लेकिन शुक्र अदा करने का ख़्याल कम ही इन्सानों को आता है।

हवाएं भी अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की एक अज़ीम निशानी हैं। हवाओं का चलाना कभी गर्म, कभी ठण्डी, कभी पुरलुत्फ़ व फ़रहत बख़्श, कभी तेज़ व तुन्द ख़ौफ़ पैदा करने वाली, कभी फल–फूल में ज़िन्दगी की लहर दौड़ाने वाली, कभी ख़ुश्क़ उजाड़ बांझ कर देने वाली, कभी बारिशें लाकर इन्सानों को बेहद फ़ायदा पहुंचाने वाली, कभी तूफ़ानी रफ़्तार से चलकर हर चीज़ को तह व बाला करने वाली यह हवाएं अपने अन्दर अल्लाह की रहमत, कुदरत, अज़ाब और रुबूबियत की निशानी रखती हैं।

इसी तरह बादल जो आसमान और ज़मीन के बीच काम में लगा दिये गए हैं। बादलों का मामला भी निहायत हैरतअंगेज़ है, उनके बनाने, भेजने और बरसने में इन्सानी मेहनत एक फ़ीसद भी नहीं होती, लेकिन इन्सानों के काम आने में उनकी हैसियत बहुत बढ़ी हुई है। समन्दर के इन्तिहाई नमकीन पानी से इन्जरात उठते हैं, बाहम मुजतमअ होकर बादलों की शक्ल अख़्तियार कर लेते हैं, हज़ारों टन वज़नी बादलों को हल्की–फुल्की हवाएं सैंकड़ों हज़ारों मील दूर ले जाती है, फिर ख़ास क़िस्म की ठण्डक और हवा का दबाव पाकर वह धीरे–धीरे पिघलते हैं और क़तरात की शक्ल में बरस कर हज़ारों लाखों बल्कि करोड़ों इन्सान व जानवरों की सैराबी बल्कि जिन्दगी व मआश का सामान बनते हैं। मुर्दा ज़मीन उससे जी उठती है और ज़मीन पर इन्सान को आबाद रखने का निज़ाम क़ायम रहता है।

"हमने आसमान से पाक व साफ़ पानी उतारा ताकि उस पानी से मुर्दा बस्ती को ज़िन्दा करें और अपनी मख़लूक़ात में बहुत सारे जानवरों और बहुत सारे इन्सानों को उससे सैराब करें।''

हज़रत मौलाना अली मियाँ नदवी (रह०)

बहैसियत-ए-उर्दू अदीब

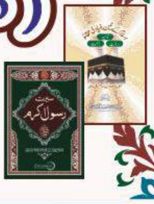

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

"आपके जामेअ, फ़िक्रअंगेज़ और दिलनशीं लब व लहजा व पैराइये बयान से नए उफ़क़ सामने आते हैं।"

(प्रोफ़ेसर रशीद अहमद सिद्दीक़ी)

"मुफ़क्किर–ए–इस्लाम हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह0) बिला शुब्हा आसमाने इल्म व अदब का एक दरख़्शां सितारा और हिन्दुस्तान की इस्लामी तारीख़ की जबीं का नूर हैं। इनकी शख़्सियत बाइसे अज़्ज़ व इफ़्तिख़ार है। आप बजा तौर पर फ़िक्रे इस्लामी के आलमी क़ायद व रहबर, तरबियते इस्लामी के क़ाफ़िले सालार और सक़ाफ़ते इस्लामी के मीरे कारवां था। मौलाना ज़बान व क़लम के एक कामयाब काज़ी थे, जिनकी ख़िदमात का दायरा निहायत मुतनव्वेअ है।

इब्तिदाई ज़माने में हज़रत मौलाना को हर छिपी हुई चीज़ पढ़ने का शौक था। उस वक़्त आपने बहुत से उर्दू उदबा की तहरीरें इस तरह पढ़ी कीं कि जज़्ब कर लीं मसनलः नयरंग ख़्याल और आबे हयात। इसी तरह अल्लामा शिबली नोमानी, मौलाना हाली, मौलवी नज़ीर अहमद, शरर मरहूम और रतन नाथ सरशार की तहरीरें नेजुल हलाल के अदारियों का भी ज़ौक़ व शौक़ से मुताला किया जिसके मुताल्लिक़ खुद हज़रत मौलाना फ़रमाते हैं कि ''उन (मौलाना आज़ाद) के ज़ोरे क़लम और जोशे बयान का तबियत ने बुरा असर कुबूल किया।

(कारवाने ज़िन्दगीः 1/95)

हज़रत मौलाना का उर्दू ज़बान का मुताला वसीअ और मुतनव्वेअ था, ताहम उनके मिज़ाज व मज़ाक़ पर किसी अदीब का कोई ख़ास असर नज़र नहीं आता। ताहम वह अपने इब्तिदाई अहद के मुताल्लिक़ खुद फ़रमाते हैं कि बहुत दिनों तक नएरंग ख़्याल और आबे हयात की तक़लीद में बहुत से सफ़हात स्याह किये जो अपनी कमस्वारी के बावजूद फ़ायदा से ख़ाली न रहे।

(कारवाने ज़िन्दगीः 1/95)

इसी तरह हज़रत मौलाना अपने इब्तिदाई मज़मून निगारी के अहद से मुताल्लिक़ फ़रमाते हैं कि उर्दू मज़मून नवीसी में इब्तिदाई असर वालिद मरहूम की किताब यादे अय्याम का था जो संजीदा ज़बान का एक शगुफ़्ता नमूना है और जिसमें तारीख़ की मतानत के साथ ज़बान का बांकपन भी मौजूद था। (कारवाने ज़िन्दगीः 1/95)

हज़रत मौलाना गरचे अदब व इंशा को एक पेशे या ज़रिया–ए–इज़हार व ख़्याल के तौर पर मुन्तख़िब नहीं किया, ताहम उर्दू अदब और फ़न्ने तारीख़ व तन्क़ीद में उन्हें कामिल दस्तदाह हासिल थी। हज़रत मौलाना के वालिद की मशहूर किताब गुल–ए–राना पर आपका फ़ाज़िलाना मुक़द्दमा इस दौर का शाहकार है।

हज़रत मौलाना ने अदब के दायरे और हुदूद को वुसअत दी, नीज़ इस्लामी अदब को आफ़ाक़ियत भी बख़्शी। वह ज़बान व अदब को महज़ एक पेशा या पेशावर लोगों के जागीर समझने के सख़्त मुख़ालिफ़ थे, जिसका सुबूत उनकी ज़िन्दा–जावेद तहरीरें व तक़रीरें हैं जो इल्म व अदब का मख़ज़न हैं और फ़ित्री व अदबी ज़ौक़ के साथ इंशा परदाज़ी के खुदादाद मलका का सुबूत भी यही वजह है कि अगर वह किसी खुश मौज़ू पर भी ख़ामाए फ़रसाई करते तो उसे शगुफ़्ता और बहार आफ़रीं बना देते। मौलाना का उस्लूब बयान दर्दमन्दी, फ़िक्रसोज़ी, दिलनशीनी और तरबियत का एक नायाब नमूना है।

हज़रत मौलाना की तमाम तर तग व दू का महवर दावते इस्लाम था। उनकी हर तहरीर व तक़रीर इल्म नाफ़ेअ और ईमाने वासेअ की दायी है। ताहम इस हक़ीक़त से भी इनकार मुमकिन नहीं कि वह हक़ीक़ी माने में ज़बान व अदब के कूचे से आशना था और ज़ौक़े सलीम से बहरावर थे। दरअस्ल उनकी नशोनुमा ख़ालिस दीनदार माहौल में होने के साथ एक अदबी फ़िज़ा में हुई और उनकी परवरिश असहाबे फ़ज़्ल व कमाल की आगोश में हुई, जिन्हें बातिनी सफ़ात में रुसूख़ था और अदब व इंशा का आला मज़ाक़ भी हासिल था। इस पर मुस्तज़ाद यह कि उनके ख़ानदानी ज़ख़ीरा–ए–कुतुब में ज़बान व अदब की मेयारी व

वक़ीअ किताबें मौजूद थीं, जिनके मुताले ने दिमाग़ को सैक़ल कर दिया और उनसे इश्तिग़ाल ने एक साहिबे तर्ज़ अदीब बना दिया। मगर उन्होंने अपने इस आला ज़ौक़ को दावते इस्लामी की तब्लीग़ के लिए वक़्फ़ कर दिया और दावती व फ़ितरी अन्सर को अदब व इंशा परदाज़ी पर हावी रखा। ताहम एक दायी के लिए इसकी अहमियत व ज़रूरत का हमेशा एतराफ़ किया जिसके बग़ैर दावत की स्प्रिट पैदा नहीं होती। वह अपनी सवानेह में उर्दू ज़बान व अदब के मुतालाती सफ़र का तज़किरा करते हुए लिखते हैं: "दीन के जिन दाइयों व उलमा को आग़ाज़े उम्र में अपने मुल्क की ज़बान व अदब के मुताले व उसका ज़ौक़ पैदा करने का मौक़ा नहीं मिलता या बड़ी उम्र में वह उनका मुताला करते हैं, उनको दीन की मुअस्सिर दावत देने और दीनी हक़ाएक़ की तफ़हीम व तालीम में नीज़ जदीद तालीम याफ़्ता तबक़े में दीनी मक़ासिद को दिलनशीन करने में दिक़्क़त पेश आती है और उनकी इंशा व तहरीर में वह ताक़त और दिलआवेज़ी नहीं होती जिसकी इस अहद में ज़रूरत है। (कारवाने ज़िन्दगी: 1/94)

हज़रत मौलाना मस्नवी और पुरतकल्लुफ़ इंशा व अदब के कभी क़ायल न थे बल्कि वह बामक़सद अदब, ज़बान के सही इस्तेमाल, ताक़तवर इंशा, ख़्यालात व जज़्बात के इज़हार और हक़ीक़ी इन्सानी तासुरात व एहसासात की तस्वीर कशी के दायी थे, इसीलिए तारीख़ में जिन लोगों का महज़ अदब से इश्तिग़ाल नहीं रहा बल्कि उन्होंने समाजी, इस्लाही, अख़्लाक़ी व तरबियती मैदान में ताले आज़माई की, हज़रत मौलाना ने उन सब बुलन्द पाये मुसन्निफ़ीन को उदबा की सफ़े अव्वल में शुमार किया है और ज़माने की सितमज़रीफ़ी का बड़े मुतास्सिफ़ और दर्दमन्द लहजे में यूं इज़हार फ़रमाया है: इन बेगुनाहों का गुनाह यह है कि उन्होंने कभी अदब व इंशा को अपना मुस्तक़िल पेशा या इज़हारे ख़्याल का ज़रिया नहीं बनाया और उनकी अक्सर तहरीरों का मौज़ू दीनी व इल्मी है।

(तारीख़ दावत व अज़ीमत: 3/241)

राब्ता–ए–अदबे इस्लामी जिसके सदर हज़रत मौलाना ही थे, जिसके क़याम का एक बुनियादी मक़सद यही था कि उल्मा व दानिशवर इन मक़ामी ज़बानों पर उबूर हासिल करें और उनकी संजीदा दावती व इस्लामी तख़लीक़ात को अदब व इंशा के दिलआवेज़ नमूनों का मुरक़्क़ा समझा जाए और एक आलमी प्लेटफ़ार्म से इस बात की तशहीर हो कि अदब का दायरा तंग नहीं है और अदब का ज़िन्दगी मस्नवी ज़िन्दगी, रूह से महरूम और तासीर से ख़ाली इंशापरदाज़ी का नाम भी नहीं है जैसा कि उमूमन ज़बान व अदब के माहिरैन समझते हैं। सीरत व सवानेह हज़रत मौलाना का पसंदीदा मौज़ूअ था, जो ख़्याल की रानाई और क़लम की जौलानी से ख़ाली न था, इसलिए उन्होंने अपनी तर्ज़ निगारिश से शख़्सियात की मुसव्विरी भी की है। जिससे उनका अदबी मज़ाक़ और तबियत की लताफ़त का सुबूत मिलता है, यही वजह है कि मौलाना का मुनफ़रिद उस्लूब कहीं भी क़लम की गुलकारी व गुलफ़िशानी से बाज़ नहीं रहता बल्कि उनकी हर तहरीर शिश्तगी व शगुफ़्तगी की आइनादार होती है। मौलाना ज़फ़र अली ख़ां का तारुफ़ उनके अशहबे क़लम से यूं निकलता है:

"मौलाना ज़फ़र अली ख़ां रज़्म व बज़्म के आदमी थे, आज यहां शेर की तरह गरज रहे हैं, कल वहां बुलबुल की तरह चहक रहे हैं, कभी जेल में हैं, कभी किसी तन्ज़ीम के क़ायद, उर्दू शायरी तो उनके घर की लौंडी थी, उर्दू ने अर्से से ऐसा क़ादिरुल कलाम शायर पैदा नहीं किया होगा। क़वाफ़ी के तो वह बादशाह थे।

(पुराने चराग़: 2/171–172)

मौलाना आज़ाद के मुताल्लिक़ आपने बरजस्ता जो बुलन्द अल्फ़ाज़ तहरीर किये हैं उनसे आपकी ज़बानदारी का बख़ूबी अंदाज़ा होता है साथ ही वह अल्फ़ाज़ ख़ुद आपकी जहदे मुसलसल पर भी सादिक़ आते हैं।

तारीख़ व तस्नीफ़ की बादिया पैमाई, सियासत के हिफ़्फ़तख़्वां को तय करने से बहुत मुख़्तलिफ़ है, अव्वलुज़्ज़िक्र के लिए फ़राग़ ख़ातिर हालात का एतदाल और इल्मी माहौल ज़रूरी है और सियासत के बेड़े को तूफ़ानों और आंधियों से मुफ़र नहीं। इन नाहमवार हालात और तूफ़ानी मौसम में भी मौलाना आज़ाद ने जितना काम कर लिया और जो नुक़ूश छोड़े वह उनकी इल्मी, ज़हनी सलाहियत और ग़ैरमामूली क़ूव्वते इरादी की दलील है। (पुराने चराग़: 2/179)

वाक़्या यह है कि हज़रत मौलाना जिस उस्लूब के बानी व ख़ातिम थे वह दरअस्ल क़ुरआन मजीद के हक़ीक़त कश उस्लूब की साफ़ झलक थी जिसमें हर जगह जज़्बात व ताक़्क़ुल का हसीन इम्तिज़ाज नज़र आता है।

इस्लाम और इन्सानियत की मसीहाई

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

जब हर क़िस्म के ज़राए और मौक़े हासिल न हों, न चौकीदार हो न थानेदार, न कोई देखने वाला हो न कोई टोकने वाला, जब चोरी, गुनाह, क़त्ल करना या हक़ मारना मुमकिन व आसान हो मगर इन्सान के अन्दर की कैफ़ियत उसका हाथ पकड़ ले और वह उस जुर्म से बाज़ रहे, इसी कैफ़ियत का नाम है इन्सानियत!

आज इन्सानों की आबादी बढ़ती जा रही है, तरक़्क़ियों का दायरा बहुत बढ़ चुका है। बिजली, हवाई जहाज़, इन्टरनेट, ऐटम बम वग़ैरह से इन्सानों की अज़ीम तरक़्क़ी का अंदाज़ा किया जा सकता है लेकिन! इन्सानियत की तरक़्क़ी इन माद्दी तरक़्क़ियों का नाम नहीं है, इन्सानियत की तरक़्क़ी का अंदाज़ा हमारी ज़िन्दगी के सांचों या माद्दी पैमानों से नहीं किया जा सकता, इसका अंदाज़ा इन्सानों के अख़लाक़ व किरदार और उनके अफ़कार व नज़रियात से किया जाता है और हक़ीक़त यह है कि आज हमारे चारों तरफ़ ज़िन्दगी का जो तूफ़ान उमड़ा हुआ है उसमें किसी को इन्सानियत का एहसास नहीं, अल्लाह ने इन्सानों को सिर्फ़ एक मेदा और पेट ही नहीं दिया बल्कि उसको एक रूह और दिल भी अता किया है जिसे जिन्सी ख़्वाहिशात और माद्दियात के रेले में फ़रामोश कर दिया गया है।

सियासी इख़्तिलाफ़ात और निज़ामे सल्तनत तो फ़ुर्सत की बातें हैं, इक़्तिदार पर क़ब्ज़ा चाहे किसी पार्टी का हो, चाहे कोई सदर या वज़ीर हो, हक़ीक़ी हुक्मरानी तो नफ़्स की है और हक़ीक़ी तसल्लुत ख़्वाहिशात का है। वक़्त का फ़रमान है कि नफ़्स की ख़्वाहिश पूरी की जाए, दिल की आग बुझायी जाए, चाहे इन्सानों के ख़ून की नहरें बहें, लाशों को रौंदना पड़े या मुल्क के मुल्क वीरान और तबाह हो जाएं। इन्सान की इतनी बड़ी आबादी में इन्सानियत की आवाज़ कहीं से सुनाई नहीं देती और अगर किसी को इन्सानियत के इन्हितात का एहसास भी है तो उसके अन्दर इतनी जुर्रत नहीं की वह आवाज़ उठा सके, पूरे–पूरे मुल्क में एक शख़्स भी ऐसा नहीं जो इन्सानियत के लिए क़ुर्बानियां दे सके। दरअस्ल यह जुर्रत सिर्फ़ पैग़म्बरों में थी, उन्होंने सारी दुनिया को चैलेंज करके इन्सानियत के ख़िलाफ़ जारी बग़ावत को रोका। उनके सामने लज़्ज़ते और दौलतें लायी गयीं मगर उन्होंने सबको ठुकरा दिया और इन्सानियत के दर्द में अपनी जान को ख़तरे में डाल दिया।

पैग़म्बर इस दुनिया से रुख़्सत हो गए लेकिन उनकी तालीमात आज भी ज़िन्दा हैं, उनके क़ायम करदा ख़ुतूत पर उनके मुत्तबिईन ने इन्सानियत की मसीहाई का जो मोर्चा संभाला और अपने–अपने इलाक़ों में यह ख़लिश पैदा की और यह महसूस कराया कि अगर इन्सानियत ने दम तोड़ दिया तो इन्सानों और जानवरों की ज़िन्दगी में कोई फ़र्क़ बाक़ी नहीं बचेगा।

इन्सानियत की हक़ीक़ी फ़लाह व बहबूद और उसकी दायमी कामयाबी पर सबसे ज़्यादा ज़ोर देने वाला मज़हब इस्लाम है। इस्लाम की तालीमात ज़िन्दगी के हर शोबे पर मुहीत हैं। जिन्दगी इन्फ़िरादी हो या इज्तिमाई, इस्लाम ने हर मौक़े के लिए ऐसी तालीमात दी हैं कि उनको अख़्तियार करने वाला एक कामयाब व क़ाबिले रश्क़ ज़िन्दगी गुज़ार सकता है। इसी तरह समाजी ज़िन्दगी के लिए भी उसकी मोतदिल और मुकम्मल हिदायात ऐसी हैं कि वह दुनियाए इन्सानियत के लिए एक बेशबहा अतिया हैं, क़ुरआन मजीद व अहादीसे नबवी में जगह–जगह इसकी तफ़सीलात मिलती हैं और रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की ज़िन्दगी उनकी बेहतरीन तफ़सीर है।

इस्लाम और दीगर अदयान व मज़ाहिब में बुनियादी फ़र्क़ यही है कि हर मज़हब फ़र्द को ख़िताब करता है और उसी की इस्लाह व तरक़्क़ी पर ज़ोर देता

है जबकि दीन–ए–इस्लाम पूरी इन्सानियत को यकसां तौर पर मुख़ातिब करता है। इसके लिए अरबी व अजमी, काले और गोरे का फ़र्क़ कोई हैसियत नहीं रखता, इसी तरह जगह या रक़ाबत के हुदूद, जुग़राफ़ियाई क़ुयूद और नस्ली हदबन्दियां इसके पैग़ाम की इशाअत में मानेअ नहीं बनती और न ही दीगर निज़ामहाए हुकूमत की तरह सयादत व क़यादत के नज़रिये इसकी राह में हाएल होते हैं।

इस्लाम एक ऐसा इन्सानी मुआशरा तश्कील देना चाहता है जो पुरअम्न, पुरकैफ़, रंगीन और अद्ल व मसावात से भरपूर मुआशरा हो, जिसमें न किब्र नख़्वत की बू हो और न हसद व बुग़्ज़ का शाएबा, न तमअ व हिस्र का गुज़र हो और न दिलशिकनी व दिलआज़ारी की गुंजाइश, जिनकी वजह से एक इन्सानी मुआशरा तअफ़्फ़ुन व सड़ाहिन का शिकार हो जाता है, इसीलिए जो चीज़ें सालेह इन्सानी समाज की तश्कील में मुख़िल हो सकती हैं, दीने इस्लाम ने उन सब पर बड़ी बारीकबीनी के साथ पाबन्दी लगा दी है।

मुआशरे में मर्द व औरत, अमीर व ग़रीब और ताक़तवर व कमज़ोर अफ़राद की हैसियतें होती हैं जिनके लिए इस्लाम ने मुक़र्ररह हुक़ूक़ बयान किये हैं, इसके रू से इन्फ़िरादी ज़िन्दगी, ख़ानदानी ज़िन्दगी, समाजी ज़िन्दगी, इक़्तिसादी ज़िन्दगी, सियासी ज़िन्दगी और अख़लाक़ व किरदार इन सब पहलुओं पर इस्लाम ने वाज़ेह हिदायात दी हैं।

इस्लाम में जिस तरह इन्सानियत के एहतिराम का दर्स दिया गया है, सालेह इन्सानी मुआशरे के क़याम की तालीम दी गयी है, इज्तिमाई व इन्फ़िरादी हुक़ूक़ बताए गए हैं और समाज के मुख़्तलिफ़ कमज़ोर तबक़ात की हिमायत में पुरज़ोर आवाज़ बुलन्द की गयी है और उनको इन्सानी समाज में बराबरी का हिस्सा दिया गया है, ठीक उसी तरह जा–बजा ऐसी सालेह और ख़ैरख़्वाहाना तालीमात भी दी गयी हैं जिनसे एक बेहतरीन सोसाइटी तैयार होती है, जिनमें न कीना–कपट होता है और न आपस में बदगुमानी और हसद का मर्ज़ होता है, बल्कि समाज का हर शख़्स बिला तफ़रीक़ मज़हब व मिल्लत एक दूसरे का बहीख़्वाह नज़र आता है।

इस्लाम ने दुनिया–ए–इन्सानियत को जो आला तालीमात अता की हैं और वह इन्सान को अख़लाक़ के जिस आला मेयार पर देखना और जिस बेहतरीन समाज की तश्कील चाहता है उसकी बेहतरीन तस्वीर अल्लाह के रसूल (स0अ0व0) की हयाते तैय्यबा और आपके असहाबे किराम (रज़ि0) की ज़िन्दगियां हैं। हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा (स0अ0व0) सारी दुनिया के लिए रसूल बनाकर भेजे गए। आप (स0अ0व0) की ज़ात सरापा रहमत और आपकी तालीमात पूरी दुनियाए इन्सानियत के लिए यकसां मुफ़ीद थी।

यूं तो इस दुनियाए अरज़ी में दर्द व मुहब्बत और सोज़दरों रखने वाले बहुत से आए और गए, बहुतों ने टूटे हुए दिलों को जोड़ने की मुहिम चलाई, प्यार व मुहब्बत की सुरीली बांसुरी बजाई, दिलों के दर्द का मदावा किया, मगर रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की ख़ासियत यह है कि आप बिला तफ़रीक़ रंग व नस्ल सारी इन्सानियत के लिए रहमत बन कर आए, आपकी आमद से पूरी इन्सानियत के तने मुर्दा में जान पड़ गयी, इन्सानियत की सूखी खेती लहलहाती नज़र आने लगी और समाज का कोई तबक़ा ऐसा नहीं बचा जो रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के फ़ैज़ाने रहमत से महरूम रहा हो। अपने व पराए, जिगरी दोस्त व जानी दुश्मन, सफ़े यारां व सफ़े दुश्मनां हर किसी ने आपके फ़ज़्ल व करम और आप (स0अ0व0) के बेपायां एहसानात का खुले दिल से एतराफ़ किया।

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के एहतिरामे इन्सानियत का जज़्बा समझने के लिए सिर्फ़ यह एक रिवायत काफ़ी है कि एक मर्तबा रसूलुल्लाह (स0अ0व0) अपने सहाबा किराम के साथ तशरीफ़ फ़रमा थे, उसी दरमियान सामने से एक यहूदी का जनाज़ा निकलता हुआ नज़र आया, रसूलुल्लाह (स0अ0व0) जनाज़े के एहतिराम में फ़ौरन खड़े हो गए। बाज़ सहाबा ने अर्ज़ किया कि ऐ अल्लाह के रसूल (स0अ0व0)! यह तो एक यहूदी का जनाज़ा है, मगर आप (स0अ0व0) ने इरशाद फ़रमायाः तो क्या हुआ वह यहूदी भी तो एक इन्सान ही था।

अलग़रज़ एक बेहतर व मिसाली समाज की तश्कील के लिए जो तामीरी तालीमात मुमकिन थीं, इस्लाम ने वह सब दुनियाए इन्सानियत को अता कीं और बग़ैर किसी मज़हबी तफ़रीक़ के पूरी इन्सानियत को उससे फ़ायदा उठाने की दावत दी।

दुआएं कुबूल क्यों नहीं होतीं?!

शेख़ुल इस्लाम जस्टिस मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी उस्मानी

"आज हरामख़ोरी सेरे मादर बन चुकी है। हर आदमी का मुंह खुला हुआ है कि किसी तरह हराम खा लूं और जिस तरह भी पैसे बन पड़ें बना लूं चाहे वह हलाल तरीक़े से हो या हराम तरीक़ा से हो, धोखे से हो या फ़रेब से हो, झूठ बोलकर हो या रिश्वत देकर हो, किसी भी तरीक़े से हो लेकिन मेरे पास पैसे आने चाहिए। आज हमारे मुल्क को अल्लाह तआला ने इतने वसाएल दिए हैं कि इसकी कोई हद व हिसाब नहीं। लेकिन लोग इन वसाएल को हराम तरीक़े से खा रहे हैं। इसके नतीजे में वह वसाएल ज़ाया हो रहे हैं। अल्लाह तआला ने इस दुनिया को आलमे असबाब बनाया है लिहाज़ा अबर इन बदआमालियों के नतीजे में मुसलमानों की पिटाई हो रही है तो यह कोई ताज्जुब की बात नहीं।

लोग कहते हैं कि हमने इतनी दुआएं मांगी मगर कुबूल न हुई, याद रखिये कि अगर हम अपने हालात का जाएज़ा लें तो ऐसा लगता है कि इन दुआओं की मिसाल ऐसी है जैसे कोई शख़्स मश्रिक़ की तरफ़ जा रहा हो और दुआ यह कर रहा हो कि या अल्लाह मुझे मग़्रिब में पहुंचा दीजिए। वह दुआ कैसे कुबूल होगी। आज हम लोगों ने रास्ता तो वह अख़्तियार किया है जो तबाही का रास्ता है और दुआएं यह मांग रहे हैं कि या अल्लाह हमें आफ़ियत और सलामती दे दीजिए। बताइये यह दुआएं कैसे कुबूल होंगी?

हां! जो लोग इख़लास के साथ दुआएं मांग रहे हैं और मांगते रहे हैं, उनकी दुआ की कुबूलियत तो यक़ीनी है कि इंशाअल्लाह उनको इन दुआओं पर अज्र व सवाब मिलेगा इसलिए कि अल्लाह तआला की तरफ़ रुजूअ करना और दुआएं करना यह भी अल्लाह की इबादत है और इसकी तौफ़ीक़ भी अल्लाह तआला की रहमत है। लिहाज़ा इन दुआओं का यह फ़ायदा तो बेशक उनको हासिल होगा, लेकिन दुनिया में इन दुआओं के नतीजे उसी वक़्त ज़ाहिर होंगे जब तुम अपने हालात तब्दील करोगे।

अल्लाह किसी क़ौम की हालत उस वक़्त तक नहीं बदलते जब तक लोग अपने हालात ख़ुद न बदलें। लिहाज़ा जब तक अपने हालात की इस्लाह नहीं करोगे और जब तक इस बात का पुख़्ता इरादा नहीं करोगे कि अल्लाह तआला की नाफ़रमानी को ज़हरे क़ातिल समझना है और जब तक इस बात का पुख़्ता इरादा नहीं करोगे कि हराम का कोई लुक़्मा पेट में नहीं जाएगा और जब तक इस बात का पुख़्ता इरादा नहीं करोगे कि हम जो कुछ करेंगे वह शरीअत के दायरे में रहते हुए करेंगे, उस वक़्त तक यह सूरतेहाल नहीं बदल सकती।

बहरहाल मायूसी की बात नहीं और न ग़ैर मामूली सदमा करने की बात है, सदमा तो बेशक है लेकिन इस सदमे का नतीजा यह होना चाहिए कि हालात को दुरुस्त करने की फ़िक्र करनी चाहिए। अपने हालात का जाएज़ा लेकर अपने गिरेबान में मुंह डालकर देखें और फिर अपने हालात को दुरुस्त करें, अपने अख़लाक़ को दुरुस्त करें, अपनी माशियत को दुरुस्त करें और अपनी मुआशरत को दुरुस्त करें। जब तक हम यह नहीं करेंगे उस वक़्त तक पिटाई तो होगी।"

(इस्लाही ख़ुत्बातः 20/124-126)

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Issue: 08 | August 2022 | Volume: 14

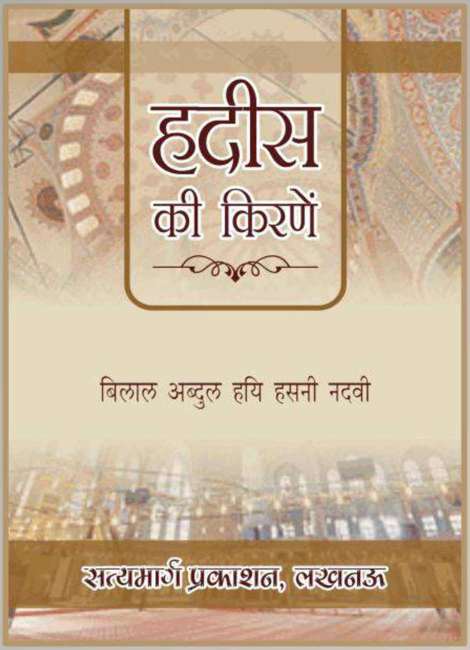

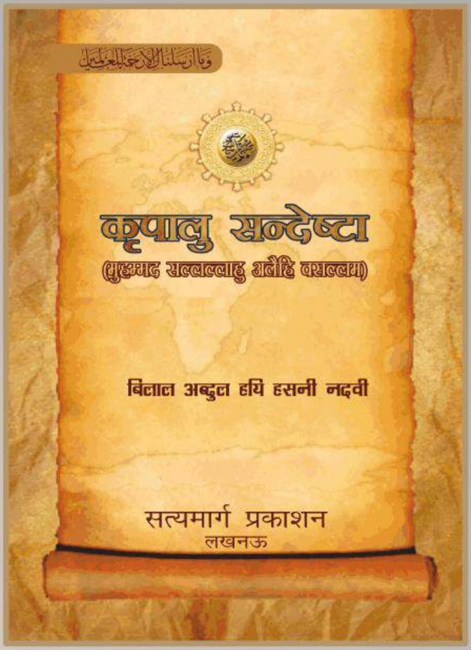

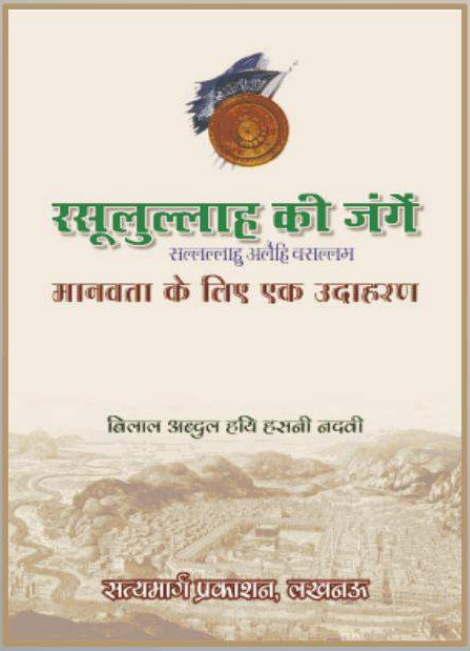

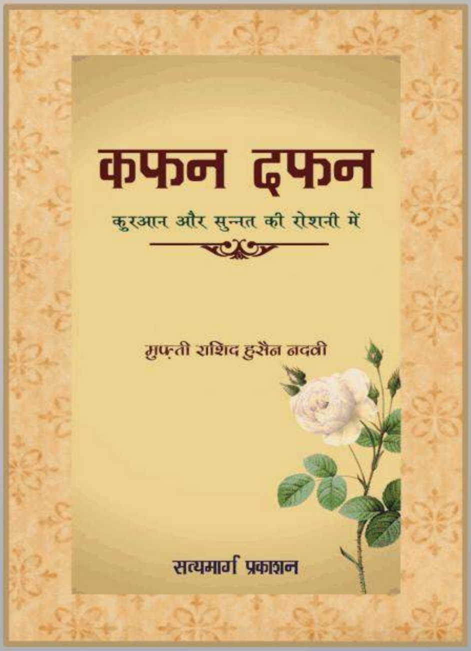

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI

Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.